सामयिक नेहा

शिक्षा एवं स्वास्थ्य की त्रैमासिक पत्रिका

RNI-UPHIN / 1999 / 1113

वर्ष - 21 | अंक 82 | जनवरी से मार्च 2018 | मूल्य ₹ 20

संस्थापक
स्व० सरदार मल नांगलिया

चेयरमैन नेहा
राधेश्याम अग्रवाल

प्रबन्ध एवं प्रधान सम्पादक
डा. महेन्द्र अग्रवाल

अतिथि सम्पादक
डा० वी०एन० अग्रवाल

सम्पादक
कुसुम बुढलाकोटी

कार्यकारी सम्पादक
अमित कुमार

सह सम्पादक
डा. दिनेश अग्रवाल
ध्रुवदास मोदी
अनीता अग्रवाल

सम्पादकीय कार्यालय

नांगलिया अस्पताल परिसर
नार्मल रोड, गोरखपुर-273 001 (उ.प्र.)
दूरभाष : 2336121, 2332095
samyikneha@rediffmail.com

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे। पत्रिका सम्बन्धित किसी प्रकार के विवाद का निपटारा गोरखपुर न्यायालय के अन्तर्गत होगा।

--------- कहाँ क्या ? ---------

- आपका पत्र मिला 02
- सम्पादकीय 03
- समझे अपने सांसो का इशरा - देवाशीष प्रसून 05
- श्वसन तंत्र की सामान्य जानकारी- डा0 प्रेमचन्द स्वर्णकार 09
- श्वास का रोग अस्थमा : एक परिचय - डा0 वी0एन0 अग्रवाल 10
- आम किन्तु घातक रोग है : तपेदिक- डा0 रत्नेश तिवारी 16
- बाल्यावस्था में निमोनिया - डा0 सतीश अग्रवाल 18
- वजहें कई हैं फेफड़े में पानी आने का - डा0 ए0एन0 त्रिगुण 21
- सिलिकोसिस : धूल कणों से फैलता रोग-सचिन नरवड़िया 23
- श्वसन रोगों के निदान में रेडियोलॉजी की भूमिका-डा0 सतीश त्रिपाठी 25
- टी0 बी0 का बढ़ता कहर - सोनल अग्रवाल 27
- फेफड़े का कैंसर - डा0 अश्विनी कुमार मिश्रा 30
- दमा : भ्रान्त धारणाएं और तथ्य - डा0 विमल मोदी 33
- दमा : कारण और उसकी सरल चिकित्सा- डा0 विमल मोदी 36
- गंध संवाद का विलक्षण संसार - डा0 श्रीगोपाल काबरा 40
- नव अन्वेषण विथिका 43
- पुस्तक समीक्षा - प्रो0 श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी 45
- अब मरने का भी अधिकार होगा - अमित कुमार 46

प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी डा. महेन्द्र अग्रवाल के द्वारा कमल आफसेट प्रिन्टर्स, दुर्गाबाड़ी रोड, गोरखपुर से छपवाकर नेहा प्रकाशन, नागंलिया अस्पताल परिसर, नार्मल स्कूल रोड, गोरखपुर से प्रकाशित किया। सम्पादक : कुसुम बुढ़लाकोटी।

आपका पत्र मिला

सामयिक नेहा का अक्टूबर से दिसम्बर 2017 के कुछ लेख ने पत्र भेजने पर मजबूर कर दिया है। न हंसने की बीमारी और डा० श्री गोपाल काबरा जी का आलेख हृदयशूल, हृदयाघात ऐसे लेख हैं जिसको कई बार पढ़ा जा सकता है फिर भी इसमें नवीनता मिलेगी। जिन्दगी के बराअर या उससे भी बढ़कर यदि किसी पत्रिका में लेख मुझे मिले तो वह है सामयिक नेहा। यह स्तर बना रहना चाहिए, या जूनून बरकार रहना चाहिए।

- मनीष मोहन गोरे
विज्ञान प्रसार, नोएडा (व्हाट्सअप से प्राप्त)

डा० साहब के प्रति इसलिए श्रद्धा के सर झुक जाता है कि वे सामयिक नेहा जैसी पत्रिका को इस मुश्किल समय में भी निकाल रहे हैं जब पत्रिकायें अपने वजूद के लिए संघर्ष कर रही हैं।

- दिलशाक
(व्हाट्सअप से प्राप्त)

कबीर दास महान संत थे। निर्गुन ब्रह्म के उपासक । वो अन्य साधु, संतों की तरह भीख मांगने से नफ़रत करते थे, इसलिए भजन पूजन के साथ-साथ जुलाहे का भी काम करते थे। हफ्ते भर में जितना कपड़ा (गाढ़ा) तैयार हो जाता उसे वो लोगों को बेच देते और जो मिलता उससे अपना गुजारा करते।

एक दुष्ट व्यक्ति भी उनसे प्रति सप्ताह कुछ कपड़ा खरीदता और हर बार वह क़ीमत बतौर कुछ खोटे सिक्के दे जाता । कबीर चुपचाप उससे खोटे सिक्के ले लेते और फिर उन्हें कुएं में फेंक देते । एक बार कबीर कुछ दिनों के लिए कहीं बाहर गए तो अपने बुने कपड़े बेचने को काम अपने एक शिष्य को सौंप गए। शिष्य जब कपड़ा बेच रहा था तो वही व्यक्ति आया जो हर हफ्ते खोटे सिक्के देकर कबीर से कपड़ा खरीदा करता था। उसने इस बार भी बिना सकुचाए कुछ कपड़ा खरीदा और खोटे सिक्के बदले में दिए, जिनका चलन संभव न था। खोटे सिक्के देखकर शिष्य ने उस व्यक्ति को बहुत भला-बुरा कहा और अपना कपड़ा छीनकर उसे भगा दिया।

जब कबीर यात्रा से लौटे तो शिष्य ने यह बात

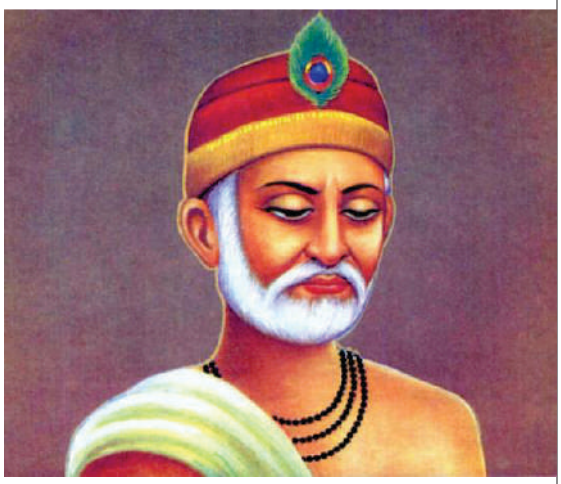

कबीरदास को बताई शिष्य से यह सुनकर कबीर दास को बहुत दुख हुआ। अनायास ही उनके मुख से निकल पड़ा-

'कबिरा आप ठगाइए, और न ठगिए कोय।
आप ठगे सुख होत है और ठगे दुख होय ।।

फिर वह शिष्य को समझाते हुए बोले , मैं उससे खोटे सिक्के लेकर इसलिए कुएं में फेंक देता था। कि उन सिक्कों से कोई और व्यक्ति न ठगा जा सके। मैं ही कुछ नुकसान सह लूं वह ठीक है।' शिष्य नतमस्तक हो गया।

रोचक तथ्य

मनुष्य की आँखें 10 लाख रंगों में फर्क कर सकती हैं परन्तु हमारा मस्तिष्क इतने रंगों को याद नहीं रख सकता है।

अतिथि सम्पादक की कलम से....

शरीर को चलाने के लिए जो प्राथमिक चीज है वह है सांस। सांस से शरीर जीवित रहता है और फिर अन्य चीजों की जरूरत होती है। प्रकृति ने शरीर को चलाने के लिए पूरा एक श्वसन तन्त्र विकसित किया है जो अपने आपमें इंजीनियरिंग का बेमिसाल निर्माण है। श्वसन तन्त्र की पूरी प्रणाली एक समन्वयक के साथ जब लयबद्ध होकर कार्य करती है तो यह किसी चमत्कार के सदृश्य होता है।

जैसा कि शरीर का प्रत्येक अंग रोग ग्रस्त होता है। श्वसन तन्त्र के विभिन्न अंग भी रोग ग्रस्त होते हैं। इसमें से कुछ रोग सामान्य होते हैं जो कि मामूली उपचार से ठीक हो जाते हैं जबकि कुछ रोग जटिल और जानलेवा। ऐसे रोगों की नियमित अनुवेक्षण (मानीटरिंग) के साथ-साथ लगातार औषधि की जरूरत होती है। ऐसे ही रोगों पर जनसामान्य को जानकारी देने के लिए सामयिक नेहा का यह अंक 'श्वसन तंत्र के रोग, विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा हैं। इसमें लगभग सभी सामान्य विषयों को लिया गया है जिससे कि जनसामान्य इससे जागरूक हो सके।

इन्टरवेन्शनल पल्मोरी मेडिसिन द्वारा चेस्ट के विभिन्न रोगो का पता लगाना व निदान करना एक नई विधा है, जिसका विस्तार अब भारत में तेजी से हो रहा है, इसमें ब्रान्कोस्कोपी (फेफड़े की दूरबीन जांच) प्रमुख है। जिसके द्वारा श्वांस नली के रास्ते मरीज के फेफड़े के अनेक रोग पता किये जाते है व निदान भी संभव है। थोरकोस्कोपी द्वारा एक छोटे से चीरे से फेफड़े के बाहर की प्लूरल केविटी के रोगो का निरीक्षण व निदान किया जाता है।

यहाँ एक और बात पर चर्चा कर लेना उचित होगा कि, श्वसन तंत्र की कई बीमारियों का संबंध पर्यावरण से सीधे तौर पर जुड़ा है। एलर्जी से संबंधित रोग, अस्थमा, टी०बी० इसमें प्रमुख हैं। स्वच्छ वातावरण और पर्यावरण हो हम श्वसन तंत्र के बहुत से रोगों से बच सकते हैं। जीवन की आपाधापी एवं भौतिकवाद में हम अपने स्वास्थ्य को खाते जा रहे हैं। यह पार्ट प्रगति हमारे स्वास्थ्य के शर्तों पर होने लगे तो यह एक चिन्तनीय विषय है।

नेहा परिवार व विशेषरूप से डा० महेन्द्र अग्रवाल जी का मैं अतिथि सम्पादक के रूप में मेरा चयन करने के लिए हृदय से आभारी हूँ। नेहा के भविष्य की शुभकामनाएँ।

- डा० वी०एन० अग्रवाल

सम्पादकीय

भारतीय संस्कृति स्वयं में विशेष गुणों को समेटे हैं। 'विश्व बधुत्व' का भाव इसमें है। सर्वे भवन्तु सुखिना को लेकर चलती है।

पंचतत्वों से ही मानव शरीर का निर्माण हुआ है। वायु, जल, मिट्टी, आकाश, अग्नि सभी तत्व प्रकृति से ही प्राप्त हुए हैं। जीवन यापन के सभी साधन प्रकृति से प्राप्त हुए हैं। जिनके द्वारा ही व्यक्ति का संरक्षण होता है। प्रकृति के प्रति हमारे भी कुछ महत्वपूर्ण कर्त्तव्य हैं, जिसमें मुख्य यह है कि प्रकृति हमें जिस रूप में प्राप्त हुई है। उसी रूप में आने वाली पीढ़ी के लिए छोड़ें। हमारे किसी कार्य-कलाप से इसमें क्षति न आए, वायु में शुद्धता रहे, जल में पचित्रता रहे, पर्यावरण सुरक्षित रहे, भौतिकतावादी सोच के कारण मनुष्य प्रकृति का अधिकाधिक शोषण करता आ रहा है। अविवेकपूर्ण तरीकों को अपनाने के कारण लगातार प्रकृति को क्षति पहुँचा रहा है। जिसका दुष्प्रभाव जल, वायु, पर्यावरण सभी पर पड़ रहा है। इस सभी का दुष्प्रभाव व्यक्ति पर भी पड़ रहा है। अभी पिछले दिनों दिल्ली में प्रदुषण से जो अव्यवस्था फैली, उससे सभी अवगत हैं। दैनिक कार्य-कलाप कर पाने में बाधा आना, सांस लेने में दिक्कत, प्रदुषण के कारण दिन में भी अंधेरा छा जाना आदि इसके कुप्रभाव रहे। यह बड़ा संकेत है कि यदि हम पर्यावरण के प्रति सतर्क नहीं हुए तो स्वयं इसके शिकार हो जायेंगे। तो जागे प्राकृति संसाधनों के प्रयोग में सावधानी बरत कर पर्यावरण रक्षा में सहभागी बनें। छोटे-प्रयास जैसे कचरे का उचित निस्तारण करके, अपने घर के आस-पास का वातावरण स्वच्छ रखकर, किसी शुभ अवसर पर वृक्षारोपण करके छोटे बच्चों को पर्यावरण के प्रति जागरूप करके प्रकृति का संवर्धन व विकास कर सकते हैं।

विशेषांक अंक की श्रृंखला में जनवरी माह में श्वसन तंत्र विशेषांक प्रस्तुत है। जिसका कार्यभार संभालने के लिये सामयिक नेहा परिवार डॉ० वी०एन० अग्रवाल (छाती एवं श्वसन रोग विशेषज्ञ) का आभारी है, जिनके अथक प्रयास व सहयोग से यह अंक साकार रूप ले सका।

नव वर्ष सभी के जीवन में उर्जा, उमंग, प्रेम, सहायता, सेवा लेकर आए व स्वास्थ्य मार्ग प्रशस्त रहे, इसी कामना के साथ....।

- कुसुम बुढ़लोकोटि

समझे अपनी सांसों का इशारा

व्यस्त जिंदगी में भले ही लोग 'सांस लेने की फुर्सत नहीं'' का दम भरते हैं, लेकिन वास्तविकता यह है कि स्वस्थ जीवन के लिए सांसों का इशारा समझना जरूरी है। वैसे तो सभी श्वसन रोगें के कुछ लक्षण मिलते-जुलते हैं, जैसे कि दम फूलना, खासी और बलगम का आना ओ सीने में दर्द , लेकिन हर रोग का अपना कारण और उनसे मुक्ति का अलग इलाज होता है। आइए जानते हैं इनके बारे में , जरा विस्तार से।

जब फेफड़ों में सूजन आ जाए :- सीओपीडी फेफड़ों की ऐसी बीमारी है, जिसमें फेफड़ों में सूजन आने लगती है। यह सूजन कई कारणों से हो सकती है, जिसमें मुख्य कारण धूम्रपान और प्रदूषण हैं। होता यह है कि सांस लेने के दौरान धूल, धूआं या प्रदूषण के कण फेफड़ों तक आकर जमने लगते हैं, लंबे समय के बाद जिससे वहां सूजन होने लगती है। शुरूआती दौर में अगर इसका पता चल जाए तो दवाइयों के इस्तेमाल से, धुम्रपान छोड़ने से और प्रदूषण से बचने से इस पर नियंत्रण पाया जा सकता है, लेकिन इस रोग को लगातार नजरअंदाज करने से, लंबी अवधि में यह एक गंभीर रोग के रूप में स्थाई हो जाता है, जिसमें सांस की नलियां सिकुड़ जाती है और सांस लेने में लगातार दिक्कत बनी रहती है। इसी को क्रॉनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिसीज यानी सी.ओ.पी.डी कहते हैं।

जब फेफड़ों में एलर्जी के कारण सांस की नलियां सिकुड़ें :- दूसरी तरफ, अगर हम अस्थमा (दमा) की बात करें तो यह फेफड़ों की एक तरह की प्रतिक्रिया या रीएक्शन है, जो एलर्जी वाली किसी भी परिस्थिति या एक्सपोजन के कारण पनमता है। एलर्जी की इस अवस्था को उत्पन्न करने वाली चीजों को ट्रिगर कहते हैं, जो धूल, धूआं, अगरबत्ती, सुगंध, ठंडी चीजें खाने या पीने से, तेज ए.सी. में रहने से, सोफे या कालीन के फर से, पालतू पशुओं के रोवें से या किसी सूती या ऊनी कपड़े के रेशे आदि से भी हो सकता है। दमें के हर मरीज के लिए अलग-अलग ट्रिगर का होना संभव है और दमें के रोगी को समय के साथ पता चल जाता है कि किन चीजों से उनके फेफड़ों में एलर्जी है। सांस के साथ जब इन ट्रिगर्स के कण फेफड़ों तक जाते हैं, तो एलर्जी के कारण फेफड़ों में सांस की नलियां एकदम से सिकुड़ जाती हैं और इस कारण सांस लेने में तकलीफ होने लगती हैं। नलियां पतली हो जाती हैं, जिससे वायु का प्रवाह कम हो जात है और इस कारण सांस लेने में तकलीफ़ होने लगती हैं। नलियों पतली हो जाती हैं जिससे वायु काप्रवाह कम हो जाता है और अचानक से यह प्रक्रिया होने के कारण सांस लेते वक्त दम फूलने लगता हैं। इसी को दमें का दौरा कहते हैं। दमें की दवाइयां लेने से या एलर्जी के एक्पोजर को हटा देने से दमें का दौरा शांत हो जाता है।

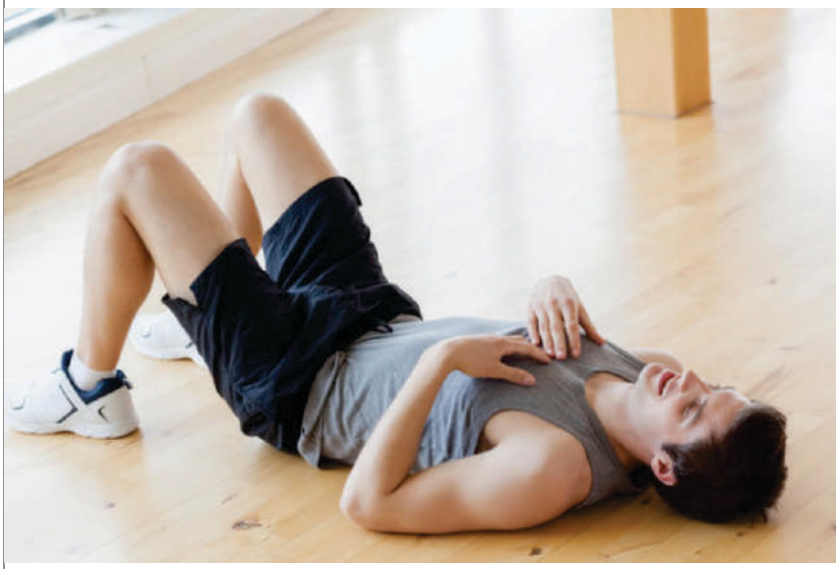

दमा और सी.ओ.पी.डी.में अंतर :- दमा का दौरा अचानक

से आता है, जबकि सी.ओ.पी.डी. की बीमारी लंबे समय से चल रही होती हैं सी.ओ.पी.डी. में रोगी को हमेंश ही सांस लेने में दिक्कत होती है, जबकि दमा के मरीज को एलर्जी के एक्सपोजर के कारण ही दमें का दौरा आता है। दोनों की बीमारीयों के लक्षण एक-से है। दोनों ही मर्ज में सांस लेने में दिक्कत होती है, चलते वक्त दम फूलने लगता है, खांसी आती है और खांसी के साथ बलगम का आना भी आम है। कुछ मामलों में सीने में दर्द भी होता है। अंतर यह है कि दमा हमेशा बना नहीं रहता है, इसका कभी-कभी दौरा आता है, एलर्जी होने के कारण सांस फूलती है और एलर्जी का प्रभाव खत्म होने के बाद यह ठीक भी हो जाता है।

सी.ओ.पी.डी. में हमेशा सांस फूलती रहती है, चाहे सुबह हो या शाम या फिर रात हो, आप घर में होया बाहर तकलीफ हमेशा बनी रहती ह। हर वक्त मरीज का दम फूलता रहता है और कमोबेश यह स्थिति हमेशा बनी रहती है। इस रोग में रोगी पूरी तरह से कभी ठीक नहीं हो पाता है, जबकि अगर दमा है, तो दम फूलना कभी-कभी होता है और रोगी को आमतौर पर पता होता है कि वह कौन-से कारण हैं , जिनके कारण एलर्जी होगी और दमा का दौरा आ सकता है, तो उन कारणों से बचकर दमें का रोगी अपने रोग से बचा रह सकता है। हालांकि कुछ लोगों में दमा होने की प्रबृति जन्मजात होती है। इसके कारण आनुवांशिक होते हैं। माता-पिता, दादा-दादी या नाना-नानी का अगर यह बीमारी रहती है, तो जेनेटिक विकार के रूप में यह रोग किसी व्यक्ति को हो सकता है।

ऐसे त्योहार, जिनमें पटाखे छूटते हैं या फिर सर्दी के मौसम में, जब धूल और धुआं मिलकर एक तरह का स्मॉग (धूम-कोहरा) बन लेते हैं। यह स्मॉग पूरे शहर को ढक लेता है। इसमें धूल और धुआं , दोनों के कण मिले रहते हैं और जब लोग सांस लेते हैं तो उनके फेफड़ों तक इसके कण चले जाता है, जो कि फेफड़ों के लिए काफ़ी खतरनाक तो उनके फेफड़ों तक इसके कण चले जाते हैं, जो कि फेफड़ों के लिए काफी खतरनाक हैं इससे बचने का सबसे सहज उपाय है कि ऐसे कोहरे के छंटने के बाद ही घर से निकलना चाहिए। बाहर जाकर व्यायाम भी ऐसे धूल ओर धुएं वाले कोहरे के छंटने बाद ही किया जाना चाहिए। कुछ लोगों को सुबह-सुबह या शाम को बाहर निकलने की आदत होती है। उन्हें अपनी यह आदत बदलनी चाहिए और बाहर निकलने से पहले प्रदूषण के इस कोहरे के छंटने का इंतजार करना चाहिए।

क्या है श्वसन-रोगों से बचाव के उपाय :- चाहे सी.ओ.पी.डी. हो या दमा, इनसे बचने का सबसे अहम तरीका स्वस्थ जीवन-शैली का चुनाव है। हमें अपने आसपास के वातावरण से शुरू करना चाहिए। घर का वातावरण और बाहर का वातावरण शुद्ध होना चाहिए। घर में अगर पैंट हो रहा है और आपको दिक्कत है, तो आपको इससे दूर रहना

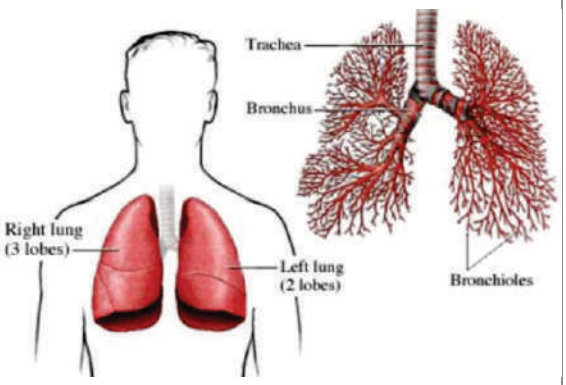

चाहिए। बाहर अगर कोई निर्माण-कार्य हो रहा है और आपको इससे एलर्जी है तो वहां न जाएं। जब घर में हवा की शुद्धता बहुत बुरे स्तर पर हो तो एयर प्योरिफायार के इस्तेमाल करने से गुरेज नहीं करना चाहिए। तत्काल ही सिगरेट, बीड़ी पीना छोड़ दें। धूम्रपान न ही खुद करें और न ही उन लोगों की सोहबत में रहें, जो धूम्रपान करते हैं।

भोजन में विटामिन सी (आंवला, संतरा, नींबू, अमरूद व स्ट्रॉबेरीज जैसे खट्टे फल, टमाअर, मटर ओर पपीता आदि), विटामिन ई (बादाम ओर सुरजमुखी, कद्दू ओर तिल के बीज आदि) ओर ओमेगा-३ फैटी एसिड (अलसी का तेल,मछली का तेज, अखरोट, मछली के अंडे, सोयाबीन ओर पालक आदि) की प्रचुर मात्रा होनी चाहिए, ताकि शरीर में रोग-प्रतिरोध की क्षमता विकसित हो सके।

इन बातों पर भी रखें ध्यान :-

• अव्वल तो भारी यातायात में यात्रा करने से बचना चाहिए, लेकिन अगर संभव न हो तो और प्रदूषित इलाके में

जाने की मजबूरी हो, तो डिस्पोजेबल मास्क का इस्तेमाल करने में कोताही नहीं बरतनी चाहिए। ये मास्क कुछ घंटों के लिए ही उपयोग में लाए जात हैं, फिर इन्हें बदल देना चाहिए।

• कार से सफर करते वक्त विंडो बंद रखनी चाहिए ओर ए.सी ऑन कर लेना चाहिए ताकि शुद्ध हवा का प्रवाह बना रहे। कार का एयर फिल्टर नियमित रूप में बदलते रहना चाहिए।

• बच्चों, गर्भवती महिलाआकें, बुजुर्गो ओर उनको जो हृदय या श्वसन की किसी पुरानी बीमारी से पीड़ित हैं, विशेष तोर पर प्रदूषण के दुष्प्रभावों से बचकर रहना चाहिए। जब हवा की गुणवत्ता घट जाए, तो उन्हें नियमित रूप से स्वास्थ्य की जांच करवाते रहना चाहिए। और जरूरत पड़ने पर श्वसन विशेषज्ञ की सलाह लेनी चाहिए। समय पर बताई गई दवाएं नियमित रूप से लेते रहना चाहिए।

क्या करें कि दमा का दोरा न पड़े :-

• व्यक्तिगत साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें।

• घर और आस-पड़ोस को साफ रखें।

• ठंडी चीजों और ऐसी चीजों से परहेज करें, जिनसे आपको एलर्जी हो।

• संगेदनशील लोगों आवश्यक होने पर मास्क का इस्तेमाल करें।

• चिकित्सक की सलाह से फिटनेस प्रोग्राम बनाएं और सुरक्षित व्यायाम ही करें।

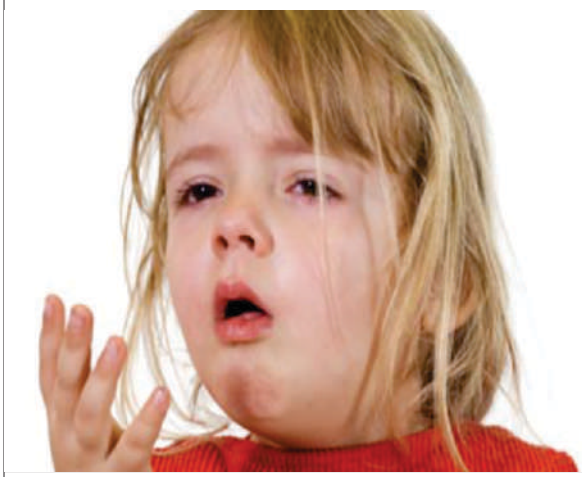

निशाने पर मासूम :- विभिन्न अध्ययनों से इस बात की पुष्टि हुई है कि दमा के लिए मानव-निर्मित प्रदूषण सबसे ज्यादा जिम्मेदार है। बच्चे प्रदूषण की चपेट में जल्दी आते है। बच्चों के फेफड़े व्यस्क की तुलना में कम विकसित होते है। ऐस में उनके फेफड़े हवा को अंदर बाहर व्यस्क की तुलना में ज्यादा बार करते है। प्रदूषित हवा ऐसी स्थिती में उनके फेफड़ों पर विपरीत असर डालती है। आलम यह है कि 5 से 10 साल की उम्र के बच्चों को अस्थमा व फेफड़ों के कैंसर होने की संभावना ज्यादा रहती हैं डीजल वाहनों से निकलने वाले धुएं में नाइट्रोजन ऑक्साइड और पर्टिकुलर मैटर अस्थमा और फेफड़ों के कैंसर के लिए जिम्मेदार होता है।

फल खाएं, दमा भगाएं :- जार्जिया स्टेट विश्वविद्यालय के शेधकर्ता जियान -डोंग ली की टीम ने अपने अध्ययन में पाया है कि अंगूर में रिसवराट्राल पाया जाता है, जो दमा को दूर भगाने में कारगर है। रिसवराट्राल में सूजन की कम करने का गुण होता है। यह श्वासनली को बाधा रहित बनाता है।

• नियमित रूप से प्राणायाम, योगाभ्यास, एरोबिक व्यायाम और ध्यान करें, इससे श्वसन-तंत्र स्वस्थ रहता है, साथ ही तनाव से मुक्ति भी मिलती है।

• घर के खाने को वरीयता दें। बाहर के भोजन या स्ट्रीट फूड से बचें।

• धूम्रपान को पूरी तरह से ना कहें।

• चिकित्सकीय सलाह से ही कोई दवा लें ।

स्वस्थ फेफड़ों के लिए करें धूम्रपान से तौबा :- तंबाकू के धूएं का सेवन स्वास्थ्य के लिए बहुत ही घातक है। धूम्रपान का कोई भी सुरक्षित तरीका नहीं है। सिगरेट के बदले सिगार, पाइप या हुक्का पीन से सेहत से जुड़े जोखिमें में कोई कमी नहीं आती है। धूम्रपान शरीर के हर अंग पर दुष्प्रभाव डालता है। फेफड़े, हृदय, जठरंत्र पथ (गैस्ट्रोइंटेस्टाइन ट्रैक) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र, गुर्दे ओ प्रजनन तंत्र आदि सभी धूम्रपान से बुरी तरह प्रभावित होत हैं। धूम्रपान दिल का दौरा, वातस्फीति (एम्फायसेमा) फेफड़ों के कैंसर, क्रोनिक ब्रोकाइटिस और सी.ओ.पी.डी. का प्रमुख कारण है। धूम्रपान छोड़ने के लिए पल्मोनोलॉजिस्ट या चेस्ट

विशेषज्ञ की सलाह लेनी चाहिए, ताकि वह इसके लिए उपयुक्त तरीके सूझा सकें। धूम्रपान छोड़ने के निम्नलिखित तरीके हो सकते हैं-

छोड़ने की तारीख तय करें :- एक तारीख तय करें, जिस दिन निश्चित तौर से आप धूम्रपान छोड़ देंगे और प्रणपूर्वक धूम्रपान त्याग दें।

धूम्रपान छोड़ने के तीन प्रचलित तरीके हैं, जिनमें जो पल्मोनोलॉजिस्अ कहें उनका पालन करना चाहिए। 'कोल्ड टर्की' नामक तरीके में तत्काल ही एक बार में धूम्रपान छोड़ने को प्रण लेना पड़ता है। दूसरा तरीका है कि धीरे-धीरे करके सिगरेट की संख्या कम की जाए और ऐसा तब तक किया जाए, जब तक कि सिगरेट पीना बंद न हो जाए। तीसरा तरीका है कि एक सिगरेट का थोड़ा-सा हिस्सा ही पिया जाए और एक तारीख तय करके सिगरेट पीना पूरी तरह से छोड़ दिया जाए।

गम, स्प्रे या पैच के रूप में कुछ दवाएं हैं, जिनसे धूम्रपान छोड़ने में मदद मिलत है परंतु इनका इस्तेमाल पल्मोनोलॉजिस्ट के निर्देश कि अनुसार ही किया जाना चाहिए।

धूम्रपान छोड़ने से दमा ओर सी.ओ.पी.डी में तो राहत मिलती ही है, साथ ही हृदय संबंधी रोगों पर काबू रहता है। धूम्रपान छोड़ने से फिर से स्वस्थ होन की अनुभूति है और आंतरिक शक्ति का विस्तार होता है। अन्य बीमारियों की संभावना कम होती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता का पुनर्गठन होता है।

दमा से ग्रसित होने पर खासतौर पर क्या करें :-

- चिकित्सक द्वारा बताई दवाओं को नियमित सेवन करें।
- गोलियाँ के बनिस्बत इनहेलर या नेबुलाइजर को तवज्जो दें, क्योंकि इससे दवा तुरंत सीधे फेफड़ों तक पहुचती हैं।
- दौरा आने पर धैर्य से काम लें और इनलेहर ओर नेबुलाइजर का प्रयोग करें।
- नेबुलाइजर रखें ताकि जरूरत पड़ने पर इका तत्काल इस्तेमाल हो सके।
- इनहेलर रखें, ताकि जरूरत पड़ने ज्यादातर मामलों में लोग इसका सही इस्तेमाल नहीं कर पाने के कारण तकलीफ में घुटते रहे हैं।
- दमा का दौरा लाने वाले ट्रिगर्स से बचें।
- डंप वाली जगहों से दूर रहे।
- नियमित रूप से प्रणायाम करें
- प्रचुर मात्रा में पानी पीएं। पानी का तापमान समान्य रखें।
- अपने वजन को नियंत्रित रखें।

न करें खर्राटों को नजर अंदाज :- सी.ओ.पी.डी. की तरह एक और रोग है, जो श्वसन तंत्र से संबंधित है और लाखों लोगों के कष्ट का कारण है। हम स्लीप एप्निया की बात कर रहे हैं। यह निद्रा संबंधी विकार है। इस रोग से ग्रसित व्यक्ति बहुत ही जोर से खर्राटे लेता है इतने जोर से कि यह खर्राटे पड़ोसियों तक को भी सुनाई देता हैं। खर्राटे रुक-रुककर आते हैं, जैसे कि लगता हे कि सांस रुक गई हैं और फिर से शुरू हुई हैं । काम के वक्त ओर ड्राइविंग करते वक्त बड़ी जोर की नींद आती है। ध्यान रखने की क्षमता कम हो जाती है याददाश्त कमजोर और मन तनावग्रस्त रहता हैं सुबह में सिरदर्द की शिकायत रहती है, रात में बार-बार पेशाब के लिए उठना पड़ता है और सेक्स के प्रति अरुचि रहती है।

भारत में इस रोग के 12 करोड़ के लगभग रोगियों के

- शेष पृष्ठ 15 पर .....

श्वसन तंत्र की सामान्य जानकरी

- डा० प्रेमचन्द्र स्वर्णकार
एम०डी० (पैथ)

मोटे तौर पर शरीर को तीन हिस्सों में बाँट सकते हैं- सिर, धड़ और हाथ-पैर। सिर के ऊपरी भाग कपाल में मस्तिष्क रहता है। सामने की ओर धड़, एक मांसपेशियों के आड़े परदे द्वारा दो भागों में विभक्त होता है। इस परदे को मध्य पट या डायफ्राम कहते हैं। डायफ्राम श्वसन क्रिया के दौरान श्वांस को अन्दर खींचने और बाहर छोड़ने में भी मदद करता है। डायफ्राम के ऊपर का हिस्सा सीना या वक्ष कहलाता है। वक्ष में शरीर के दो प्रमुख अंग, हृदय और फेफड़े स्थित होते हैं। डायफ्राम के निचले हिस्से को पेट या उदर कहते हैं।

श्वसन तंत्र में नासिका, श्वांस नलिका एवं दोनों फेफड़े शामिल होते हैं। फेफड़ों के भीतर एक बार वायु का जाना और फिर बाहर आना, श्वसन क्रम कहलाता है। सांस भीतर खींचने को प्रश्वसन कहते हैं और श्वास बाहर छोड़ने को निःश्वसन कहते हैं। जब ताजा हवा फेफड़ों में भरती है तो वह बारीक-बारीक रक्त नलिकाओं के माध्यम से रक्त के सम्पर्क में आती है और इस दौरान रक्त से कार्बनडाय आक्साइड, आद्रता और वाष्पशील हानिकारक पदार्थ निकलकर उसमें ऑक्सीजन मिल जाती है।

सामान्य तौर पर स्वस्थ व्यक्ति एक मिनट में 13 से 18 बार श्वास लेता और छोड़ता है। जबकि बच्चों में यह क्रिया और जल्दी-जल्दी होती है। नवजात शिशु तो एक मिनट में चालीस बार श्वास लेता और छोड़ता है। दौड़ने, काम करने या अन्य तरह के परिश्रम करने से भी श्वास की गति तेज हो जाती है। क्योंकि इस वक्त शरीर को अधिक मात्रा में ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है और इसकी आपूर्ति वह श्वसन क्रिया तेज करके करता है। श्वसन क्रिया शरीर का ताप भी स्थिर रखती है।

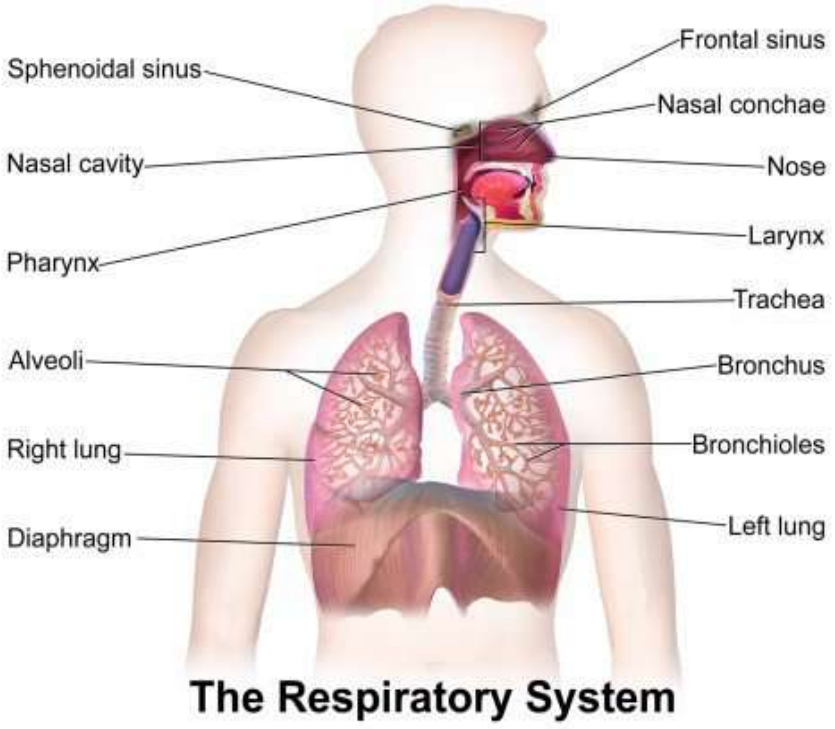

The Respiratory System

फेफड़े के छोटी-छोटी करोड़ों वायु कोशिकाएँ होती हैं, जो आक्सीजन सोखने का मुख्य कार्य करती हैं, अगर इन कोशिकाओं को खोल कर फैला दिया जाय तो एक लान टेनिस कोर्ट के बराबर का क्षेत्रफल हो जाता है।

श्वसन तंन्त्र निरन्तर कार्यशील रहता है, और शरीर का बाहरी वातावरण से सबसे ज्यादा सम्पर्क इसी का होता है, अतः वातावरण के परिवर्तन व प्रदूषण का सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव फेफड़ों पर ही होता है।

श्वास का रोग अस्थमा : एक परिचय

- डा० वी०एन० अग्रवाल
एम०डी० (चेस्ट), गोल्ड मेडलिस्ट

चेहरा पसीने से लथपथ, बिस्तर पर पाल हुआ शरीर, हर सांस के साथ गले और पसलियों में पड़ते गहरे गड्ढे। यह स्थिति होती है अस्थमा के अटैक के समय रोगी की। धीरे-धीरे गले और पसलियों के गड्ढे गहरे होने लगते हैं, सूं सूं की आवाज ज्यादा तेज होने लगती है और सांस में बढ़ती घुटन के साथ रोगी की आँख खुल जाती है। यह इन्हेलर की दवा लेता है और कुछ ही मिनटों में आराम आने लगता है। अक्सर अस्थमा के अटैक की शुरूआत रात में होती है। रात के काले सन्नाटे में हर सांस के साथ आने वाली सूं सूं की आवाज स्थिति को और भयानक बना देती है। हमारे देश में करीब 2 करोड़ लोगों को अस्थमा की बीमारी है। इस बीमारी की संख्या एक दशक में 50 प्रतिशत बढ़ गई है। 77 प्रतिशत रोगियों को अस्थमा की तकलीफ 5 वर्ष की उम्र से पहले शुरू हो जाती है। अनुवांशिक जीन्स के द्वारा अस्थमा-एलर्जी की बीमारी परिवार में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में फैलती है।

अस्थमा क्या है? :- जीवन जारी रखने के लिए पैसा, मकान, रोटी सभी महत्वपूर्ण है लेकिन सबसे अधिक आवश्यक है हवा में विद्यमान आक्सीजन, जिसके बिना हम कुछ मिनट भी जिन्दा नहीं रह सकते हैं। ईश्वर दयालू है और प्रकृति महान, उसने हमें प्रचुर मात्रा में आक्सीजन उपलब्ध कराई है। हम श्वास के साथ आक्सीजन अन्दर लेते हैं तथा अशुद्ध हवा कार्बन डाईआक्साईड श्वांस के साथ बाहर निकालते हैं। श्वांस नलियों के द्वारा हवा श्वांस के साथ शरीर में आती और जाती है। अस्थमा में इन श्वास लियां में रूकावट आ जाती है। जिससे श्वास कठिनाई से आता है। रूकावट जितनी अधिक होगी, अस्थमा का दौरा भी उतना ही तेज होगा।

अस्थमा रोगी की श्वांस नलियों में रूकावट क्यों आती है? :- अस्थमा के रोगी की श्वांस नलियों में कई कारणों से रूकावट आती है। श्वांस नलियों के चारो ओर मांसपेशियाँ होती है और इनके संकुचन से ये सिकुड़ जाती है। दूसरा ज्यादा महत्वपूर्ण कारण है। श्वांस नलियों में सूजन यानी इन्फ्लेमेशन होना। जिस प्रकार आई फ्लू से आँखों में सूजन आ जाती है। उसी प्रकार सूजन के कारण श्वास नलियाँ सूजकर लाल हो जाती हैं। श्वांस नलियों में सिकुड़न का अन्य कारण होता है बलगम का जमाव। अस्थमा रोगी में गाढ़ा बलगम श्वास नलियों में जम जाता है। जिससे श्वास नलियों का आकार कम होकर रूकावट बढ़ जाती है।

अस्थमा में रोगी को क्या तकलीफ होती है? :- श्वास नलियों में रूकावट दूर करने के प्रयास में रोगी की खांसी आती है लेकिन सिकुड़ी हुई इन हजारों श्वास नलियों में पड़ा हुआ बलगम निकल नहीं पाता है और खांसी के साथ सांस की तकलीफ होने लगती है। हवा की पर्याप्त मात्रा सिकुड़ी हुई श्वांस नलियों के द्वारा लेने में रोगी को बहुत मेहनत करनी पड़ती है जो श्वांस में तकलीफ के रूप में महसूस होती है। इस कड़ी मेहनत से तेज ठण्ड के महीने दिसम्बर-जनवरी की रात में रोगी को पसीना आ जाता है। इसके अलावा खाना नलियों की सिकुड़न के कारण श्वांस में सूं सूं की आवाज आने लगती है और छाती में भारीपन महसूस होता है। अस्थमा के समय कितना सांस है इसका अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि वाक्य बोलते समय रोगी की सांस कितनी बार टूटती है।

अस्थमा किस प्रकार परिवार में एक से दूसरे व्यक्ति को होता है? :- जिस प्रकार बच्चे में माता-पिता के गुण आते हैं, उसी प्रकार कुछ अवगुण भी आ जाते हैं। जीन्स के द्वारा गुण अवगुण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाते है। अस्थमा भी जीन्स के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी जाता है। इसके साथ यह समझना भी आवश्यक है कि अस्थमा के रोगी के हर बच्चे को अस्थमा हो, जरूरी नहीं है। जिस बच्चे में माता-पिता के अस्थमा के जीन्स आ जाते हैं सिर्फ उसे ही यह रोग हो सकता है। बहुत से लोग जिनमें अस्थमा के जीन्स होते हुए भी बिल्कुल ठीक होते हैं। उन्हें जीवन में यदि प्रतिकुल वातावरण में रहना पड़े तो अस्थमा हो जाता है।

अस्थमा कारक वातावरण कौन सा होता है? :-

धूल :- साधारण तौर पर टीले या खेत की धूल से अस्थमा नहीं होता। लेकिन यदि घर से धूल एक ही स्थान पर काफी समय तक पड़ी रहे तो यह अस्थमा कारक बन जाती है। घर में काफी समय से पड़ा धूल में एक सूक्ष्म जीवाणू हाउस डस्ट माइट पैदा हो जाता है। जिस धूल में जितना डस्ट माइट अधिक होगा, वह धूल उतनी ही ज्यादा अस्थमा कारक होगी। अन्धेरे बन्द पड़े स्थान जहाँ नमी ज्यादा हो डस्ट माइट की मात्रा तेजी से बढ़ती है। इसलिए वेसमेन्ट की धूल, काफी समय से पड़ी किताबें और बन्द पड़े अनाज की धूल से ज्यादा तेज अस्थमा होता है।

गला-जुकाम :- गला खराब होकर होने वाली जुकाम के कारण अस्थमा-एलर्जी का रोग बढ़ जाता है। पराग कणः जिन पेड़ों के फूलों से बारीक पाउडरनुमा परागकण निकलते है उनसे अस्थमा होने की संभावना बढ़ जाती है। इनमें प्रमुख है छिलल (वन्दर की रोटी का पेड़) अरंडी, कीकर और नीम के परागकरण।

धुम्रपान का धुआं :- धुम्रपान करते व्यक्ति के पास

बैठने से अस्थमा-एलर्जी का रोग बढ़ जाता है।

प्रदूषण :- प्रदूषित धूयें वाले वातावरण की वायु में सांस में लेने से अस्थमा-एलर्जी के रोग बढ़ जाते हैं। अस्थमा बढ़ाने वाले प्रदूषण में प्रमुख है, पेट्रोल, डीजल का धूँआ, पटाखों, फैक्ट्री, छौंक का धूंआ आदि। पालतू जानवर, पालतू कुत्ता और बिल्ली जैसे जानवरों के सम्पर्क में आने से भी अस्थमा-एलर्जी की बीमारी बढ़ जाती है।

तेज व्यायाम :- जब अस्थमा की तकलीफ तेज नहीं होती है तब साधारण व्यायाम करने से कोई तकलीफ नहीं

होती है। लेकिन तेज व्यायाम विशेष तौर से तकलीफ के समय करने से अस्थमा की गंभीरता बढ़ जाती है।

ठण्डी हवा :- अस्थमा का रोगी जब ठण्डी हवा के सम्पर्क में आता है तो उसे अस्थमा की तकलीफ होने लगती है।

मानसिक चिन्ता :- अस्थमा के कई रोगियों में मानसिक चिन्ता रोग की गम्भीरता को बढ़ा देती है। सभी रोगियों में उपरोक्त कारण अस्थमा की तकलीफ को नहीं बढ़ाते हैं। अलग-अलग रोगियों की तकलीफ अलग-अलग कारणों से बढ़ती है। इसलिए इन कारणों को पहचानना आवश्यक है जिससे इनसे बन कर अस्थमा की तकलीफ से बचा जा सके।

कैसे पहचाने अस्थमा को :- किसी व्यक्ति को निम्न प्रकार के लक्षण हो तो अस्थमा की संभावना हो सकती है।

खांसी

सांस में सूं-सूं, सीटी जैसी आवाज।

सांस फूलना।

अस्थमा की तकलीफ के यह लक्षण हर समय एक जैसे नहीं रहते है। रोगी कभी तो इतना ठीक महसूस करता है जैसे कोई बीमारी ही नहीं रही हो। लेकिन कभी इतनी तकलीफ में आ जाता है कि दवा के बिना वाथरूम जाना भी दुष्कर हो जाता है। बहुत से अस्थमा रोगियों में चारों लक्षण होते हैं लेकिन कई लोगों में सिर्फ एक या दो लक्षण ही प्रमुख होते हैं। अस्थमा के रोगी के खांसी-सांस के यह लक्षण विशेष परिस्थतियों में बढ़ जाते हैं।

यदि आपको या आपके बच्चे को खांसी एवं सांस के लक्षण निम्न परिस्थतियों में बढ़ते हैं तो अस्थमा की तकलीफ हो सकती है-

- ⌘ रात में नींद के समय।
- ⌘ व्यायाम के समय।
- ⌘ जुकाम खांसी लगने पर।
- ⌘ पुरानी धूल, धूएं या परागकणों के सम्पर्क के दौरान।
- ⌘ मौसम बदलाव पर।

क्या अस्थमा को जड़ से खत्म किया जा सकता है?

अस्थमा की प्रवृति जीन्स के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में जाती है। विज्ञान की प्रयत्न के बावजूद जीन्स में से अस्थमा की प्रवृति को खत्म करना अभी तक संभव नहीं हो पाया है, इसलिए अस्थमा की प्रवृति को रोगी के शरीर से खत्म करना संभव नहीं है। हालांकि दवा की मदद से रोगी कष्ट रहित साधारण जीवन जी सकता है।

भविष्य में अस्थमा को जड़ से समाप्त किया जा सकेगा ? :- जीन्स पर आधारित खोज करने वालों का अनुमान है कि अगले 20-25 वर्षों से अस्थमा की जिनेटिक दवा बन जायेगी। जिससे इसे जड़ से समाप्त किया जा सकेगा। 20-25 वर्षों पहले अस्थमा के रोगियों का जीवन बड़ा कष्टप्रद होता था। लेकिन अब इन्हें लेकर एक नेब्यूलाइजर से व्यक्ति एक सुखद जीवन जी सकते हैं। अस्थमा को परास्त कर बहुत से ऐसे लोग हुए है। जिन्होंने जीवन में सफलता पाई है। इनमें कुछ प्रमुख व्यक्ति है- अमिताभ बच्चन, अशोक कुमार, उषा, इंदिरा गाँधी, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, जॉन एफ कैनडी आदि।

अस्थमा की दवा :- मुख्य तौर पर दो प्रकार की दवायें अस्थमा के रोगियों को दी जाती है। तकलीफ में आराम देने वाली (रिलीवर) और दूसरी अस्थमा की तकलीफ से बचाव करने वाली (प्रिवेन्टर)।

(अ) आराम देने वाली दवा :- इस प्रकार की दवा तकलीफ में तुरन्त राहत देने के लिए दी जाती है। एस्थलिन, डेरीफाईलिन आदि दवाईयों इस श्रेणी में आती है।

(ब) सूजन कम कर बचाव करने वाली दवा :- बचाव वाली दवा हालांकि तकलीफ में तुरन्त राहत नहीं देती हैं, लेकिन लगातार लेने से अस्थमा की तकलीफ के दौरों से बचा जा सकता है। ल्यूकोट्राईन नामक सूजन कम करने वाले तत्व को रोकने में भी कई दवाईयों प्रभावशाली होती है। इनमें मोन्टेल्यूकास्ट दवाईयाँ प्रमुख है। कुछ लोगों में इन दवाइयों से भी अस्थमा एवं एलर्जी की तकलीफ में लाभ मिलता है।

श्वास रोग की दवायें तीन प्रकार से ली जा सकती है :-

(1) मुंह से गोली सीरफ

(2) इन्जेक्शन से

श्वास :- इन्हें लर अथवा नेबूलाइजर के द्वारा मुंह एवं इन्जेक्शन द्वारा दी जाने वाली दवा अधिक मात्रा में लेनी होती है। यह दवा रक्त में पहुँचकर शरीर के सभी अंगों में रक्त के साथ पहुँचती है। दवा का वह भाग जो फेफड़ों में जाता है, श्वांस रोग में लाभ देता है किन्तु अन्य अंगों में पहुँचने वाली दवा विकार पैदा करती है। उदाहरण के लिए सालब्यूटामोल गोली से हाथों में कम्पन वॉयटे आना, हृदय मति में गड़बड़ मधुमेय या डायबिटिज को बढ़ना आदि हो सकते हैं। सालब्यूटामोल इन्हे लर द्वारा लेने पर यह दवा सिर्फ फेफड़ों में जाती है और इस प्रकार यह श्वांस रोग में तुरन्त आराम देती है एक अन्य अंगों में विकार भी पैदा नहीं करती।

इन्जेक्शन द्वारा ली गई दवा से जितने समय में आराम पहुँचता है, इन्हे लर द्वारा ली गई दवा भी उतनी ही शीघ्रता से प्रभावकारी होती है।

क्या इन्हेलर की दवा ज्यादा स्ट्रोंग होती है?

इन्हेलर द्वारा वे दवाएं ही ली जाती हैं जो कि मुंह से अथवा इन्जेक्शन के द्वारा दी जाती है इसलिए यह कहना उचित न होगा कि इन्हेलर द्वारा ली जाने वाली दवायें ज्यादा तेज होती है। उदाहरण के लिए सालब्यूटामोल इन्हेलर और

सालब्यूटामोल गोली में एक ही दवा होती है लेकिन इन्हेलर एक प्रकार से मशीन जैसी दिखाई देती है, जिसे उच्च शक्ति वाली दवा समझ आम आदमी ज्यादा तेज मानता है, जो कि एक भ्रान्ति है।

क्या इन्हेलर से दवा की अधिक मात्रा शरीर में जाती है? :- इन्हेलर द्वारा ली जाने वाली दवा मुँह से ली जानी वाली दवा की तुलना में शरीर में कम जाती है। उदाहरण के तौर पर एस्थलीन की 4 मि०ग्रा० की गोली के बराबर मात्रा में दवा लेने के लिए सालब्यूटेमोल इन्हेलर द्वारा 40 पफ लेने होंगे, जबकि साधारणतया एक बार में दो पफ लेने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार इन्हेलर द्वारा मुँह से ली जाने वाली दवा की तुलना में सिर्फ 5 प्रतिशत दवा ही शरीर में जाती है।

दवा कम होने के बावजूद इतना महंगा क्यों है? :- इन्हेलर द्वारा दवा लने के लिए इन्हेलर में विशेष प्रकार की गैस के साथ दवा भरनी पड़ती है तथा हर बार दवा के साथ इन्हेलर भी नया आता है, इसलिए इसकी कीमत दवा की मात्रा कम होने के बावजूद ज्यादा होती है। कीमत अधिक होने के कारण भी कई व्यक्ति इन्हेलर को ज्यादा तेज दवा मानते हैं।

क्या इन्हेलर लगातार लेने से इसकी आदत पड़ जाती है ? :- इन्हेलर द्वारा वे ही दवाईयाँ ली जाती है, जो कि श्वांस रोग में मुँह से दी जाती है। इन दोनों ही तरीकों से आदत नहीं पड़ती है। कई बार कुछ रोगी बार-बार इन्हेलर का प्रयोग करते हैं, इससे लगता है कि उनको इन्हेलर की आदत पड़ गई है, लेकिन ऐसा आदत नहीं बल्कि बीमारी की गंभीरता बढ़ने की वजह से होता है।

क्या इन्हेलर शुरू करने के बाद अन्य दवाएं असर नहीं करती हैं? :- यह सही नहीं है। श्वांस रोग में सुधार के साथ इन्हेलर का उपयोग कम अथवा बन्द किया जा सकता है। तथा इन्हेलर से दवा लेने से अन्य दवाओं के असर में कोई फर्क नहीं पड़ता है। इतने अच्छे होने के बावजूद इन्हेलर की कुछ कमियाँ है जैसे ये साथ ले जाने में असुविधाजनक है तथा अन्य व्यक्तियों के सामने इनके उपयोग से झिझक होती है।

स्पेसर क्या है तथा इसका उपयोग क्या है? :- इन्हेलर को दबाने पर 70 मील प्रति घण्टा की तेज गति से उसमें से दवा निकलती है। यदि इन्हेलर के दबाने के साथ ही श्वांस अन्दर न खींचा जायें तो अधिकतर दवा मुँह में ही जम जाती है और दवा की बहुत कम मात्रा फेफड़ों में पहुँचती है। स्पेसर एक चेम्बर है जिसमें इन्हेलर लगा दिया जाता है। इन्हेलर से पहले दवा स्पेसर में भर देते हैं तथा फिर रोगी सुविधानुसार श्वास के साथ दवा स्पेसर से फेफड़ों में खींच लेता है। इस प्रकार इन्हेलर के दबाने और श्वांस खींचने में मुश्किल सामंजस्य की आवश्यकता नहीं होती है। तीन चार साल के छोटे बच्चे भी स्पेसर लगे इन्हेलर से दवा ले सकते हैं। लेकिन अपने बड़े आकार के कारण स्पेसर घर से बाहर ले जाना कई लोगों के लिए असुविधाजनक होता है।

इन्हेलर से दवा तेज गति से मुँह में टकराती है, जिससे दवा का आभास होता है, लेकिन स्पेसर से दवा लेते समय दवा धीमी गति से अन्दर गति से अन्दर जाती है। इन्हेलर से सीधे दवा 90 प्रतिशत मुँह में रूक जाती है तथा

10 प्रतिशत फेफड़ों में जाती है। स्पेसर के साथ दवा लेने पर 20 प्रतिशत फेफड़ों में तथा 80 प्रतिशत स्पेसर में रूक जाती है, जबकि नाममात्र की दवा मुँह में रूकती है। मुँह में दवा न रूकने से मुँह में दवा का स्वाद स्पेसर उपयोग करने के समय मालूम नहीं होता है इसलिए ऐसा प्रतीत होता है जैसे दवा न ली गई हो, जबकि वास्तव में दवा की दो गुनी मात्रा फेफड़ों में पहुँचती है।

श्वास रोग के तेज दौरे के समय इन्हेलेशन के द्वारा दवा कैसे ली जा सकती है?

(अ) स्पेसर की मदद से इन्हेलर से रोगी श्वास रोग के तेज दौरे के समय भी दवा ले सकता है। रूक-रूक कर कुछ मिनटों में ६-८ पफ दवा स्पेसर से लेने पर कई बार श्वास रोग के तेज दौरे पर भी काबू पाया जा सकता है।

(ब) नेब्यूलाइजर मशीन के द्वारा दवा लेने से श्वास रोग के गंभीर दौरे में भी तुरन्त लाभ मिलता है। वे रोगी जिन्हे बार-बार श्वास रोग के तेज दौरे पड़ते हैं वे इस मशीन को घर में रख सकते हैं। चिकित्सक तो अपने पास आये रोगी के श्वांस रोग के तेज दौरे में मशीन से दवा देकर तुरन्त लाभ पहुँचा ही सकते है।

अस्थमा के इन्हेलर रूपी इलाज के बावजूद भारत में सिर्फ 30-40 प्रतिशत लोग ही इन्हेलर का उपयोग कर रहे हैं। 60-70 प्रतिशत रोगी गोलियों का इस्तेमाल कर रहे हैं जो कम प्रभावशाली ही नहीं बल्कि ज्यादा नुकसानदायक भी होती है। इन्हेलर लेने वाले अस्थमा रोगी भी दवा का नियमित प्रयोग नहीं करते हैं। वे अक्सर इन्हेलर तब शुरू करते हैं जब उन्हें तकलीफ महसूस होती है या तकलीफ सहन करने की क्षमता से ज्यादा बढ़ जाती है। वैज्ञानिक तथ्य बताते हैं कि अस्थमा रोग श्वास नलियों में लगातार चलता रहता है जबकि तकलीफ के लक्षण कभी कभी ही होते हैं। इसलिए रोग पर नियंत्रण पाने एवं श्वांस नलियों में होने वाले विकास को बचाने के लिए नियमित दवा का प्रयोग जरूरी है।

बिना दवा अस्थमा का ईलाज :- अस्थमा-एलर्जी की तकलीफ बढ़ाने वाले कारणों के सम्पर्क में आता है। यदि कारणों का सम्पर्क खत्म कर दिया जाये तो अस्थमा-एलर्जी की तकलीफ भी नहीं होगी। इसके लिये सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है रोगी का ज्ञान।

1. अस्थमा करने वाले कारणों की पहचान करने का सबसे अच्छा तरीका रोगी का अनुभव। छींक लगाने के बाद छींक अथवा अस्थमा की तकलीफ होती है तो छींक की अस्थमा कारक के रूप में पहचान हो जाती है। कई बार दिन में अस्थमा कारक का सम्पर्क रात को तकलीफ बढ़ा देता है एवं जिस रात अस्थमा की तकलीफ ज्यादा हो तो सोचना चाहिये कि पहले दिन क्या कारण थे जिनका सम्पर्क रोगी से हुआ। दूसरा तरीका है एलर्जी टेस्ट द्वारा अस्थमा कारकों का पता लगाना। इससे एलर्जी वाले कारणों का पता लगाया जा सकता है। लेकिन बिना एलर्जी वाले कारणों का पता नहीं लग पाता है।
2. अस्थमा कारकों की पहचान के बाद इन कारकों से निपटने की कला सीख कर अपनायें।

अस्थमा के बारे में भ्रांतिया :-

1. क्या बड़े होने पर सभी बच्चों का अस्थमा ठीक हो जाता है? अक्सर माता-पिता मानते हैं कि 13-14 साल की उम्र आने पर बच्चों को अस्थमा ठीक हो जाता है। यह ठीक

है कि करीब 50 प्रतिशत बच्चों का अस्थमा काफी ठीक हो जाता है लेकिन बाकी 50 प्रतिशत में अस्थमा की तकलीफ बनी रहती है। ठीक हुए बच्चों में से बहुत सी की बीमारी 30-40 साल की उम्र में दोबारा शुरू हो सकती है।

2. क्या अस्थमा आपसी सम्पर्क से फैलता है? यह एक बहुत बड़ी गलत धारणा है। अस्थमा किसी भी प्रकार के निकट सम्पर्क से नहीं फैलता है।

3. क्या योग से अस्थमा ठीक हो सकता है? योग के कुछ आसन, किया एवं प्रणायाम में अस्थमा में लाभ पाया गया है लेकिन अस्थमा जड़ से खत्म नहीं होता है इसलिये दवा छोड़ना रिस्कि होता है। अस्थमा की तेज तकलीफ के समय योग नहीं करना चाहिये।

4. क्या मानसिक परेशानी से अस्थमा होता है? मानसिक परेशानी से अस्थमा नहीं होता। मानसिक परेशानी पीड़ित रोगी में अस्थमा की तकलीफ को बढ़ा देती है।

5. क्या अस्थमा से जीवन को खतरा है? अस्थमा से मृत्यु केवल गम्भीर रोग से ग्रसित लोगों में होती है। विशेष तौर से वे लोग जो नियमित और समय पर दवाई नहीं लेते है।

6. क्या अस्थमा से पीड़ित बच्चा व्यायाम नहीं कर सकता। अस्थमा से पीड़ित बच्चा सभी तरह के व्यायाम कर सकता है। कोई भी व्यायाम या खेल शुरू होने से १० मिनट पहले हल्की कसरत जैसे घूमना, आदि कर लेना चाहिये। इसी तरह समाप्ति पर भी एकदम बंद नहीं करके हल्की कसरत कुछ समय के लिए करनी चाहिये। यदि इसके बावजूद भी अस्थमा का दौरा पड़ता है तो खेल शुरू होने से पहले सालब्यूटामोल इनहेलर लेना चाहिये। इन्हीं थोड़ी सी सावधानियों के साथ कई खिलाड़ियों ने जो अस्थमा से पीड़ित थे ओलम्पिक जैसे खेलों में स्वर्ण पदक जीते हैं। केवल तेज दौरे के समय नहीं खेलना चाहिए।

7. अस्थमा से क्या टी०बी० हो सकती है? टी०बी० बैक्टीरिया से होने वाली बीमारी है जो अस्थमा के कारण नहीं हो सकती। ज्यादा गंभीर टी०बी० की बीमारी के बहुत से रोगियों को सांस लेने में कठिनाई होने लगती है। कई बार टी०बी० का पूरा ईलाज लेने के बाद भी सांस तकलीफ बनी रहती है। यह सांस लेने की तकलीफ अस्थमा से भिन्न होती है।

- पृष्ठ 8 का शेष.....

होने की संभावना है। बच्चों में भी इसका जोखिम बना रहता है। ज्यादातर मामलों में इस रोग का सही निदान और उपचार नहीं हो पाता है ओ कइयों की तो जान पर बन आती है। अगर स्लीप एप्निया का उपचार न हो तो यह दूसरी बीमारियों के लिए न्योंता बन जात है। इससे उच्च रक्त चाप , मधुमेह और दिल का दौरा या मस्तिष्क के स्ट्रोक की संभावना बढ़ जाती है। इसके निदान के लिए बिना देर किए किसी योग्य पल्मोनोरालॉजिस्ट से परामर्श लिया जाना श्रेयस्कर है।

यह आलेख देवाशीष प्रसून एवं डा० प्रशांत सक्सेना से बातचीत पर आधारित। डा० सक्सेना दिल्ली स्थित मैक्स स्मार्ट सुपरस्पेशलिटी अस्पताल, साकेत के पल्मोनोलॉजी, क्रिटिकल केयर और स्लीप मेडिसिन विभाग के प्रमुख हैं। लंग्स-टू-लाइफ नामक मुहिम से डा० सक्सेना ने फ्लू, दमा, सी०ओ०पी०डी० एवं धूम्रपान व्यसन से मुक्ति का बीड़ा उठाया है। मासिक पत्रिका आहा जिन्दगी से साभार।

uo o"k dh 'kHk 'kHkdkeuk,

Mk- jkt 'k dekj

dekj mipkj dUæ] 33 dl ;kjkM] xkj [kij

आम किन्तु घातक संक्रामक रोग है : तपैदिक

- डा० रत्नेश तिवारी
एम०डी० (चेस्ट)

टी० बी० जिसे यक्ष्मा, तपेदिक, क्षय रोग के नाम से भी जाना जाता है एक आम किन्तु घातक संक्रामक बीमारी है, जो टयूबरक्लोसिस नामक बैक्टिरिया के कारण होता है। एक अनुमान के अनुसार दुनिया की आबादी का एक तिहाई लोग तपेदिक से संक्रमित हैं और प्रति सेकेण्ड एक व्यक्ति की दर से यह बढ़ रहा है।

क्षय रोग के जोखिम कारक :- वैसे से तपेदिक के विषाणु से प्रत्येक व्यक्ति का सामना होता रहता है क्योंकि यह वातावरण में विचरण करते रहते हैं परन्तु हमारी प्रतिरोधकता हमें इसके संक्रमण से बचाती है। लेकिन कुछ ऐसे कारक तत्व हैं जिससे संक्रमण का खतरा कई गुना बढ़ जाता है।

- एच०आई०बी० से संक्रमित रोगी के लिए टी०बी० होने का खतरा कई गुना बढ़ जाता है। आंकड़ों के मुताबिक 13 प्रतिशत टी०बी० के रोगी एच०आई०बी० संक्रमित होते हैं।
- सिलिकोसिस नामक रोग जोखिम को 30 गुना तक बढ़ाता है।

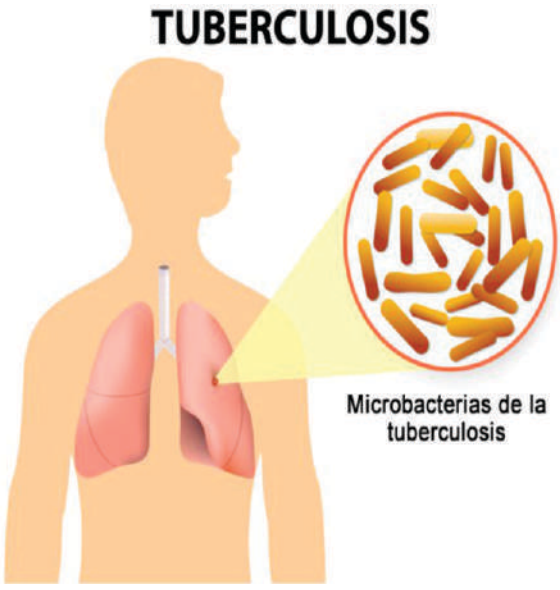

- सिगरेट पीना इसकी सम्भावनों को दो गुना बढ़ा देता है।
- मधुमेह रोग तपैदिक होने के खतरे को तकरीबन तीन गुना बढ़ा देता है।
- शराब का सेवन भी मधुमेह के खतरे को बढ़ाता है।
- कुछ दवायें जैसे कार्टिकोस्टराइ आदि इसके होने की संभावना को बढ़ाती हैं।

लक्षण :- अधिकांश लोग जिन्हें तपेदिक टी०बी० रोग हो जाता है। उनके फेफड़ों में संक्रमण हो जाता है। उनमें निम्न लक्षण दिखाई देते हैं।

- खांसी जो तीन सप्ताह या अधिक समय तक रहती हैं।
- छाती में दर्द।
- खांसी से बलगम में खून का आना।
- रात को पसीना आना।
- कमजोरी या थकान।
- अकारण वजन का कम होना।
- भूख न लगना।
- हल्का बुखार आना।

जाँच :- तपेदिक रोग को प्रमाणित करने के कई जाँच है जिनको आवश्यकतानुसार चिकित्सक करता है।

- सक्रिय टी०बी० का निदान छाती के एक्सरे द्वारा किया जा सकता है।
- बलगम का माइक्रो बायोलोजिकल जाँच।
- शरीर के तरल का कल्चर बनाकर।
- भीतरी टी०बी० का निदान ट्यूबरन्यूलाइर्न त्वचा परीक्षण (TST) या रक्त परीक्षणों से किया जाता है।

सामान्यतः सी०टी० स्कैन जाँच की आवश्यकता टी०बी० के निदान में नहीं पड़ती है लेकिन जटिल मामलों में इसकी मदद रोग को स्पष्ट करने के लिए ली जाती है।

टीके :- बीसीजी वैक्सीन एक मात्र वैक्सीन है जो कि बचपन में लगता है और फेफड़ों के टी०बी० के प्रति

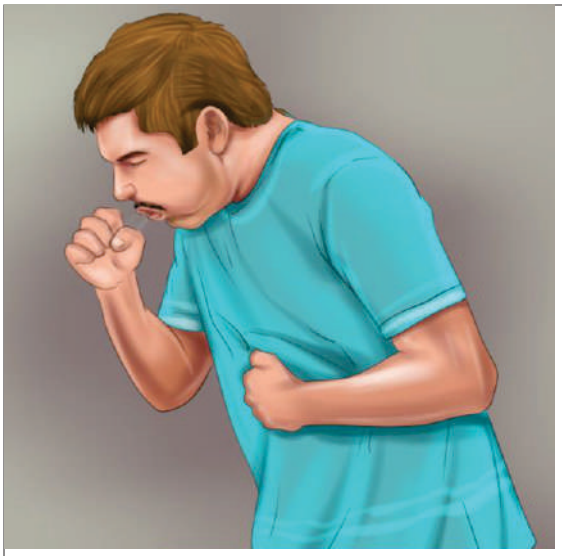

असंगत संरक्षण प्रदान करती हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य :- विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 1993 में टी०बी० को बौद्धिक स्वास्थ्य आपात स्थिति घोषित किया था और 2006 में स्टाप टी०वी० पार्टनरशीप में तपेदिक रोकने के लिये एक बौद्धिक योजना विकसित की।

प्रबंधन :- माइक्रो बैक्टीरिया कोशिका दीवार की असमान्य संरचना और रासायनिक संघटन के कारण प्रभावी टी०बी० का उपचार कठिन है। दो सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली और सबसे प्रभावी एंटीबायोटिक दवायें आइसोनियाजिड और रिपैम्पिसिन हैं। इसके उपचार में कई महीने लग सकते हैं। सक्रीय टी०बी० रोग में कई एंटीबायोटिक दवाओं के संयोजन का उपयोग किया जाता है। जिसमें कि एंटीबायोटिक प्रतिरोध विकसित करने वाले बैक्टीरिया के जोखिम को कम किया जा सके।

- शकुन्तला हास्पिटल, कूड़ाघाट तिराहा, गोरखपुर

- पृष्ठ 32 का शेष....

- ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में लघु फिल्म दिखाकर।
- सिनेमा हालों/ किसी महोत्सव और मेलों में लघु पिक्चर का आयोजन करके।
- नुक्कड़/नाटक/खेलकूद/पोस्टर इत्यादि।

8. इस क्रिया में अगर सबसे ज्यादा कोई प्रभाव डाल सकता है तो आजकल का सबसे सक्रिय तत्व (मीडिया) आजकल हर वर्ग का व्यक्ति मीडिया से किसी न किसी तरह से जुड़ा है चाहे वह टेलीविजन हो/रेडिया हो/अखबार हो या पत्रिका हो। हमारे भारतवर्ष में सरकार ने भी बहुत सारे सक्रिय कदम उठाये हैं जैसे कि सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान करना कानूनी अपराध है और 31 मई 2009 में यह आदेश दिये गये हैं कि हर मादक पदार्थों पर बिच्छू इत्यादि का चित्र अंकित होना चाहिए यह भी एक अच्छी पहल है। जैसे कि कोई व्यक्ति कई वर्षों से धूम्रपान का सेवन कर रहा है और उसने धूम्रपान न करने का विचार बनाया है कतो उसका ब्लडप्रेशर और शरीर में आक्सीजन की मात्रा बहुत अच्छी हो जाती हैं और हार्ट अटैक की सम्भावना भी कम हो जाती है। शरीर में रक्त का संचार सुचारू हो जाता है। सांस में होने वाली दिक्कतें थकावट आदि कम होने लगती है।

- विभागाध्यक्ष, टी०वी० एवं चेस्ट रोग विभाग
बी०आर०डी० मेडिकल कालेज, गोरखपुर

सामयिक नेहा के अनवरत 20 वर्षों के सफलतापूर्वक प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएं

डा. जी.एन. लाल

कान, नाक, गला रोग विशेषज्ञ

नन्दन ई०एन०टी० क्लीनिक, कैण्ट चौराहा, गोरखपुर

बाल्यावस्था में निमोनिया

- डा० सतीश अग्रवाल
एम०डी० (बाल रोग), डी०सी०एच०
पूर्व प्रोफेसर मुजफ्फरनगर मेडिकल कालेज
पूर्व वरिष्ठ बाल रोग विशेषज्ञ, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

आम बोल चाल में निमोनिया ऐसी किसी भी बीमारी को कहा जाता है, जिसमें खांसी व तेज साँस चलती हो। परन्तु चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से निमोनिया (न्यूमोनिया Pnevmonia) रोग फेफड़ों के उस भाग (Lung Parenchyma) का शोध या सज्ञान (inflammation) है जो शरीर में वायु का आदान प्रदान करता है। अर्थात विभिन्न अंगों से विसर्जित दूषित वायु (कार्बनडाई ऑक्साइड) को देता है जो अन्ततः हृदय द्वारा रक्त नलिकाओं के माध्यम से शरीर के सभी अंगों में पहुँचाई जाती है। इसे समझने के लिए शरीर के सभी अंगों में पहुँचाई जाती है। इसे समझने के लिए शरीर के श्वसन-तंत्र की संरचना को मोटे-तौर से समझना श्रेयस्कर होगा। जैसा चित्र-1 में दिखाया गया है। श्वसन तंत्र का निचला भाग एक उल्टे पेड़ की तरह है, उस पेड़ के मोटे तने को ट्रैकिया कहते हैं जो गले से लेकर वक्ष में स्थित फेफड़ों तक जाती है। वहाँ जाकर यह दो भागों में विभाजित होकर ब्रान्काइ (Cbronchi) के रूप में क्रमशः दाहिने व बायें फेफड़ों में

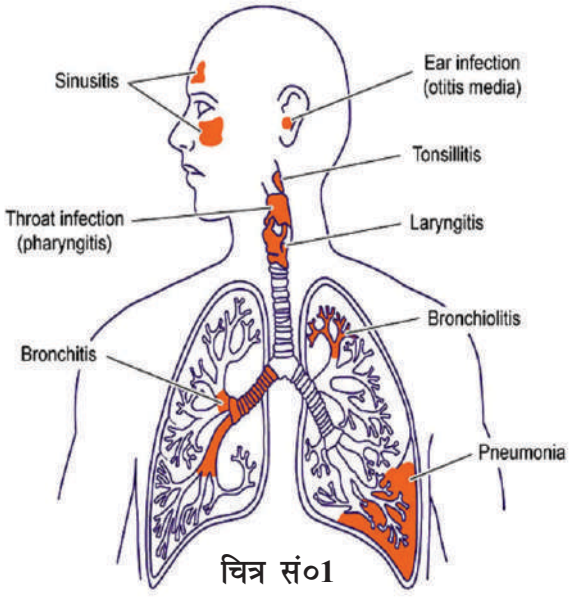

चित्र सं०1

जाती हैं। ये ब्रॉन्काइ, पेड़ की शाखाओं की तरह असंख्य छोटी-छोटी शाखाओं ब्रॉन्कियोल (bronchioles) में बँट जाते हैं। प्रत्येक ब्रॉन्कियोल के सिरे पर एक गुब्बारे नुमा अंग होता है। इन अंगों को एल्वोलाइ (Alveoli) कहते हैं। देखें चित्र-01 में दाहिने फेफड़े के निचले भाग को। ये ही (Lung Parenchyma) के मुख्य भाग हैं जो साँस लेने व छोड़ने में सिकूड़ते फूलते हैं व इन्हीं से वायु का आदान-प्रदान होता है।

निमोनिया वह रोग है जो भारत जैसे विश्व के सभी विकास शील देशों में छोटे बच्चों (विशेषकर 5 वर्ष से कम) की सबसे अधिक जान लेता है। इससे लगभग 40 लाख बच्चे असमय ही काल-कवलित हो जाते हैं।

यह रोग कैसे होता है?

यद्यपि निमोनिया कई कारणो से हो सकता है जैसे कोई जहरीली गैस, कैरोसीन जैसा द्रव, कार्बन, फेफड़ों में गलती से गई कोई बाहरी वस्तु, कुछ कृमि या कुछ अन्य रासायनिक पदार्थ, पर आम तौर से निमोनिया, एक संक्रमण (infection) से होता है जो कीटाणुओं (Micro organisms) से होता है जो कि मुख्य रूप से वाइरस होते हैं या बैक्टीरिया। ये कीटाणु नाक या मुँह द्वारा साँस के साथ फेंफड़ों में प्रवेश करते हैं और यदि बच्चे की प्रतिरोधक क्षमता (immunity) कमजोर हो तो ये रोग द्रव्य इकट्ठा हो जाता है, जिसकी वजह से, सामान्य प्रक्रिया में रूकावट आती है और बच्चे की सांस फूलती है। यदि समय रहते समुचित उपचार न मिले तो रोगी की मृत्यु भी हो सकती है। यह रोग यूँ तो कभी भी हो सकता है पर ठंढ के मौसम में इसके रोगी सबसे ज्यादा मिलते हैं।

वाइरस व बैक्टीरिया जनित निमोनिया में कुछ अन्तर होता है पर उसे पहचानना मुश्किल होता है। वाइरस से होने वाले निमोनिया हैं इन्फ्लुएंजा या उससे मिलते जुलते अन्य कुछ फ्लू। विशेष बैक्ट्रीरिया एक विशेष आयु वर्ग के

बच्चों को ही प्रायः निशाना बनाते हैं। इसीलिए एक नवजात शिशु या तीन माह के बच्चे का निमोनिया एक पांच वर्ष से या एक 10 वर्ष के बच्चे में कुछ भिन्न होता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि 3-6 माह तक के बच्चे का निमोनिया अधिक खतरनाक होता है व उसका उपचार भी अधिक कठिन होता है। कुल मिलाकर जो बैक्टीरिया सबसे अधिक निमोनिया का कारक है उसे न्यूमोकॉक्स कहते हैं जो बचपन से लेकर वयस्कों तक सभी को प्रभावित करता है।

शारीरिक लक्षण :- यह रोग अक्सर खांसी-जुकाम से शुरू होता है, शीघ्र ही बुखार भी आता है। यह खांसी व बुखार लगभग दो दिनों में ही अधिक बढ़ जाते हैं व सांस तेज चलने लगती है और बच्चा बेचैन व परेशान हो जाता है। इसे आम तौर पर पसली चलना या पाजर चलना कहते हैं और आमजनों की दृष्टि से यह सबसे आसानी से पहचाने जाने वाला लक्षण है। इसके मिलने पर बच्चे को बिना समय गंवाये चिकित्सक के पास ले जाना चाहिए। कुछ बड़े बच्चे की छाती में दर्द की शिकायत भी कर सकते हैं। कभी-कभी कुछ छोटे बच्चों के पेट में दर्द भी हो सकता है। रोग अधिक तीव्र होने पर शरीर में त्वचार का नीला पड़ना व थोड़ी बेहोशी भी आ सकती है।

चिकित्सक इन लक्षणों के अतिरिक्त स्टेथोस्कोप द्वारा रोगी की परीक्षा में कुछ अन्य लक्षण भी पाते हैं। रक्त परीक्षण व छाती का एक्स-रे रोग का निश्चित निदान करने उसका कारक को अनुमानित करने व उसकी तीव्रता का आकलन करने में सहायक होते हैं। जो सही उपचार करने के लिए आवश्यक होते हैं।

उपचार :- शरीर के अन्य कई रोगों के विपरीत निमोनिया किस कारक कीटाणु द्वारा हुआ है, इसका पक्का पता करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि कई तकनीकों का उपयोग करने पर भी जो अत्यन्त कष्टप्रद महंगी व दुरूह हैं, बहुत कम मामलों में कारक कीटाणु का सही पता लगाया जा सकता है। अतः वास्तविकता की दृष्टि से चिकित्सक प्रायः इस आधार पर उपचार की नीति तय करते हैं कि किस आयु वर्ग में रोग किस बैक्टीरिया द्वारा प्रायः होता है। उसी आधार पर ऐसे एन्टीबायोटिक का चयन किया जाता है जो उस बैक्टीरिया पर सक्रिय हो। रोगी की स्थिति का आकलन करते हुए यदि रोग की तीव्रता अधिक हो तो एक से अधिक (2 या 3) एन्टी बायोटिक भी देने पड़ते हैं जो कई सम्मानित कारक बैक्टीरिया पर काम कर सकें। उदाहरण के तौर पर 1 से 5-6 वर्ष तक के बच्चों में माना जाता है कि बीमारी न्यूमोकौकस द्वारा हुई है। (यदि रोग बहुत तीव्र न

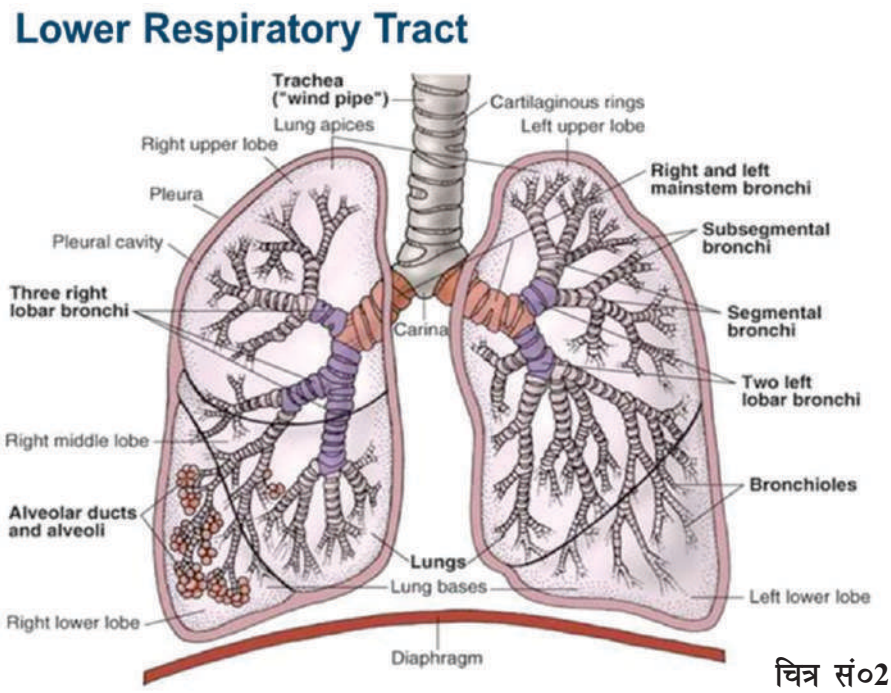

चित्र सं०2

हो) अतः उस बैक्टीरिया के विरूद्ध सक्रिय एन्टीबायोटिक एमोक्सिसिलान (amoxcicyllin) प्रायः प्रभावी होती है। पर यही नीति 1 माह के बच्चे के मामले में नहीं अपनायी जा सकती क्योंकि उनमें कारक बैक्टीरिया अलग होते हैं व उन्हें अक्सार दूसरे किस्म के एंटीबायोटिक देने पड़ते हैं।

यदि बच्चे में रोग की तीव्रता मामूली है तो उपचार घर पर रखकर किया जा सकता है व मुँह से दवा दी जा सकती है जो प्रायः एमोक्सिसिलीन या उससे मिलती जुलती दवा हो सकती है। 7-8 वर्ष से बड़े बच्चों में यह एंजिथ्रोमाइसिन हो सकती है। परन्तु यदि रोग की तीव्रता अधिक हो, बार-बार उल्टी आ रही हो, सांस बहुत तेज चल रही हो या अन्य कोई बीमारी भी साथ हो तो ऐसे मामलों में बच्चे को अस्पताल में भर्ती करना आवश्यक है क्योंकि प्रायः इन्जेक्शन द्वारा दिए जाने वाले एंटीबायोटिक, आक्सीजन व इन्ट्रावीनस फ्लुइड्स की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी यदि एक एन्टीबायोटिक का प्रभाव संतोषजनक न हो तो उसे बदल कर या उसके अतिरिक्त अन्य एन्टीबायोटिक देना आवश्यक होता है।

यहाँ यह बताना भी आवश्यक है कि यद्यपि अधिकतर रोगी लगभग एक सप्ताह में ठीक हो जाते हैं, परन्तु थोड़े से मामलों में कुछ जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं जो प्रायः 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों में अधिक होती है। उदाहरण के लिए एम्पाइमा (Empyema) फेफड़े के चारो ओर की जगह (Pleural space) पस इकट्ठा हो जाना न्यूमोथोरेक्स (Neumothorax) हवा इकट्ठी हो जाना या सेप्टीसीमिया (Septicemia) अर्थात पूरे रक्त में (infection) संक्रमण फैल जाना जैसे कॉम्पलीकेशन हो सकते हैं, जिनके लिए विशेष उपचार की आवश्यकता होती है।

निवारण या बचाव :- अच्छा पौष्टिक आहार जिसमें छोटे बच्चों में स्तनपान शामिल है व सामान्य स्वच्छता सभी रोगों से बचाव में सहायक होते हैं क्योंकि बच्चे की रोग प्रतिरोधी क्षमता व स्वस्थ वातावरण, उसे यह अवसर देते हैं कि वह निरोग रह सकते। आजकल कुछ वैक्सीन भी उपलब्ध हैं, उदाहरण के लिए हिब (Hib) वैक्सीन जो हीमोफिलस इन्फ्लएंजी के विरूद्ध व न्यूमोकोकल (Neumococeal) वैक्सीन जो न्यूमोकोक्स के विरूद्ध कारगर होती है। इनसे काफी हद तक निमोनिया से बचाव हो सकता है। कुछ वाइरस वैक्सीन भी उपलब्ध हैं पर वे उतनी कारगार नहीं हैं।

अन्त में यह कहना समीचन होगा कि निमोनिया एक ऐसी बीमारी है, जिससे बच्चों को काफी हद तक बचाया जा सकता है, और रोग होने पर, समय के अन्दर समुचित उपचार द्वारा अधिकतर मामलों में पूर्ण स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु देरी करने या गलत सलत इलाज करने से रोग की जटिलता बढ़ सकती है व बच्चे की जान को खतरा हो सकता है। अतः हम सबका कर्तव्य है कि हम इसके बचाव व उपचार के सम्बन्ध में पूर्ण प्रयास करें जिससे हमारे बच्चे स्वस्थ रहें व बड़े होकर समाज में अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकें।

- सीतापुर आई हास्पिटल परिसर,
पार्क रोड, गोरखपुर

uo o"k **2018** dh gkfnd 'kHkdkeuk,

डा. नीरज नाथानी

प्लास्टिक सर्जन

तमन्ना क्लीनिक, छात्रसंघ चौराहा, गोरखपुर

वजह कई हैं, फेफड़े में पानी आने का

– डा० ए०एन० त्रिगुण
एम०बी०बी०एस०, डी०टी०सी०डी०
(चेस्ट फिजिशियन)

श्वसन तंत्र हमारे शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है जिसकी क्रियाशीलता जीव के गर्भस्थ होकर अंगों के विकसित होने से लेकर जन्म होने के पश्चात मृत्यु तक अनवरत चलती रहती है। कहा जाता है कि मनुष्य खाना खाये बिना कुछ माह, पानी पिये बिना कुछ दिन तक जिन्दा रह सकता है, लेकिन बिना श्वांस लिये वो कुछ मिनटों का ही मेहमान हो सकता है। अतः जब हमारा श्वसन तंत्र जिसमें मुख्य अंग हमारे दो फेफड़े हैं, इतने महत्वपूर्ण है तो जाहिर है कि उन फेफड़ों में होने वाली बिमारियाँ भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होंगी, और अगर वक्त रहते इस पर नियंत्रण न किया जाय तो इसका परिणाम भी गंभीर हो सकता है। यूं तो हमारे फेफड़े कई तरह की व्याधियों के शिकार हो जाते हैं उन्हीं में से एक व्याधि है फेफड़ों में पानी आना है।

सामान्य भाषा में जब एक चिकित्सक अपने मरीज या उसके तिमारदार से कहता है कि आपके या आपके मरीज के फेफड़ें में पानी आ गया है, तो उसका वास्तविक तात्पर्य यह है कि मरीज के फेफड़ों की सुरक्षा कवच के रूप में इसके चारो तरफ लिपटी हुई झिल्लियों यानी विसलर प्ल्यूरा (Visceral Pleura) एवं पैराइटल प्ल्यूरा (Paretal Pleura) के बीच की जगह में सामान्य से ज्यादा मात्रा में द्रव्य एकत्रित हो गया है जिसे चिकित्सकीय भाषा में प्ल्यूरल इफ्यूजन (Pleural Effusion) कहते हैं। पाठकों की प्रस्तुत आलेख के माध्यम से मैं ये बताना चाहूँगा कि फेफड़ो के चारो तरफ लिपटी झिल्लियों के दो परतों एवं परतों के मुड़ने से बने निलय (Cavity) का क्या तात्पर्य है। उसकी मानव शरीर में क्या उपयोगिता है एवं उसके द्रव्य एकत्रित होने का कारण क्या है उसके लक्षण एवं उपचार क्या है।

सर्वप्रथम हम चर्चा करते हैं कि हमारे फेफड़ों की बनावट क्या है। हमारे शरीर के छाती में हमारे दो महत्वपूर्ण अंग फेफड़ों एवं दिल का निवास होता है। मनुष्य के शरीर में दो फेफड़े होते हैं। एक बायी तरफ एवं दुसरी दायीं तरफ। बायीं तरफ का फेफड़ा दायीं तरफ के फेफड़े से आकार एवं वजन में थोड़ा छोटा होता है।

प्रकृति ने हमारे इन नाजुक अंगों को एक सुरक्षात्मक आवरण प्रदान कर रखा है जिसे प्ल्यूरा (Pleura) कहा जाता है। प्ल्यूरा की एक परत जो फेफड़ों से चिपकती हुई होती है उसे विसलर प्ल्यूरा (Visceral Pleura) कहा जाता है और दुसरी परत जो पसलियों की तरफ से चिपका होता है उसे पैराइटल प्ल्यूरा (Parietal Pleura) कहते हैं। दोनों परतें आपस में फेफड़े के जड़ (Root of Lungs) पर आकर मिलती है। मिलने के क्रम में से एक निर्वात

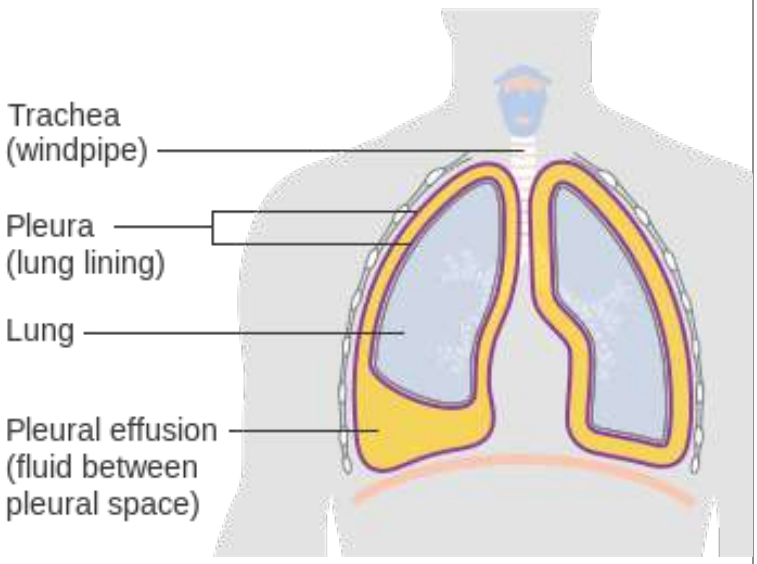

(Space) का निर्माण करती हैं जिसे प्ल्यूरा स्पेस (Pleura Space) कहते हैं। हमारे ये फेफड़े निरन्तर कार्यरत रहते हैं और इस प्रक्रिया में ये नियमित अंतराल पर फुलते पिचकते रहते हैं जिसका सीधा सम्बन्ध हमारे श्वांस लेने की प्रक्रिया से जुड़ा रहता है। जब हम बाहरी हवा को अपने अन्दर श्वांस के रूप में लेते हैं तो इस प्रक्रिया में अन्दर ली गई हवा हमारे फेफड़ों में इकट्ठी होती है। इस क्रम में फेफड़े फूलते हैं जब नियत समय के फेफड़ों की हवा बाहर निकाली जाती है जिसको हम श्वासं छोडना कहते हैं की प्रक्रिया में फेफड़े सिकुड़ते हैं। फेफड़ों के फुलने पिचकने के इस क्रम में उन फेफड़ों को किसी तरह का घर्षण का सामना ना करना पड़े एवं फेफड़े निर्बाध रूप से हमारी श्वसन प्रक्रिया को चलाते रहे इसके लिये कुदरत ने फेफड़ों को चिकनाहट (Lubricant) करने के लिए द्रव्य का निर्माण किया है जिसे हम चिकित्सकीय भाषा में प्ल्यूरल फ्लूड (Pleural Flud) कहते हैं। ये तरल द्रव्य फेफड़ों को चिकनाहट प्रदान करने का काम करता है। इस चिकनाहट वाले द्रव्य का निर्माण नियमित एवं नियंत्रित दशा में होता है एवं नियमित एवं नियन्त्रित रूप से इसका अवशेषण भी होता रहता है।

जब कभी भी प्ल्यूरला स्पेस (Pleural Space) में प्ल्यूरा फ्लूड (Pleura Flud) का बनना अवशोषण की तुलना में ज्यादा होने लगता है तो ये Pleural Cavity में एकत्रित होने लगता है जिसको आम बोल चाल की भाषा में फेफड़े में पानी भर जाना कहा जाता है।

फेफड़े में पानी आने का कारण :-

- चोट लगने के कारण।
- सूजन आदि के कारण।
- टी०वी० बैक्टिरिया, वायरस या फंगस के संक्रमण के कारण।
- कैंसर के कारण।
- लिम्फेटिक अवरोध।
- वेस्कूलर काजेज।
- कनेक्टिव टिश्यू।
- हृदय, फेफड़ा एवं उदर के ऊपरी भाग के आपरेशन के कारण।
- हपैटिक काजेज।
- रिनल काजेज।

निदान :- फेफड़ों में पानी आने की जानकारी सीने का एक्स-रे द्वारा किया जाता है। पानी की मात्रा वाली एक्सरे पर तस्वीर सफेद दिखायी पड़ती है। सामान्यतया फेफड़ों की एक्सरे में तस्वीर काली आती है। यदि फेफड़े में पानी की मात्रा कम हो तो एक्सरे से पता लगाना थोड़ा मुश्किल हो जाता है। ऐसे में छाती के अल्ट्रासाउण्ड के द्वारा फेफड़ों में पानी आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है। कभी-कभी जब फेफड़ों में पानी का मात्रा कम हो तो इस तरह का पानी दवाओं के प्रयोग से समाप्त हो जाता है।

उपचार :- फेफड़ों में पानी का उपचार एक छोटे से आपरेशन के द्वारा किया जाता है जिसे Thoracantesis Plural Taping कहा जाता है। कभी-कभी पानी की मात्रा ज्यादा होने पर, गाढ़ा या मवाद होने की दशा में एक छोटा आपरेशन करके एक नली पलोमनरी प्ल्यूरा (Pleural Cavity) में डाल कर मवाद को बाहर निकाला जाता है। जिसे Inter Costal Drainage (ICD) जो कुछ दिनों बाद स्वतः ठीक होने की प्रक्रिया द्वारा भर जाता है। पानी निकालने के पश्चात उसकी अल्प मात्रा को जाँच के लिए भेज दिया जाता है। जाँच के द्वारा फेफड़े में पानी या मवाद आने का पता लग जाता है और इसके आधार पर बिमारी का उपचार तय किया जाता है एवं उचित उपचार देकर मरीज को रोग मुक्त किया जाता है।

- 259, विकास नगर, लच्छीपुर, गोरखपुर

सिलिकोसिस धूल कणों से फैलता रोग

- सचिन नरवड़िया

यह कल्पना करना कितना असहज कर देता है कि कोई रोग व्यवसाय से सम्बंधित होता है। लोकिन यह सच है 'सिलिकोसिस' नामक रोग व्यवसाय से सम्बंधित होता है जो कि धूल में मौजूद सिलिका के कणों के कारण मनुष्यों में हो सकता है। भले ही इस रोग के बारे मे आज बात की जा रही हो परन्तु रोग अत्यंत पुराना है। यह रोग क्षेत्र विशेष में नहीं सिमटा होता है, बल्कि यह पूरे विश्व में व्याप्त है और हर साल इसके चलते हजारों लोगों की जानें जाती है।

सिलिकोसिस पुरातन समय से अनेक नामों से जाना गया हे, जिसमें मायानेर्स थेसिस, ग्राइंडरस अस्थमा, पॉटर्स रॉट कुछ प्रमुख नाम यह फेफड़ों से जुड़ा एक रोग होता है। सिलिकोसिस नाम का सर्वप्रथम प्रयोग 1870 में अचिले विस्कोन्ती (जो की एक वकील थे) ने किया था इस रोग के इतिहास पर नज़र डालें तो यह पता चलता है कि १६वी शताब्दी में अग्रिकोला ने लिखा था कि यूरोप के कर्पेथेइओन नामक पर्वत की खदानों में कई महिलाओं ने 7-7 पतियों से शादी की और वे सभ्झी पुरुष सिलिकोसिस-तपेदिक के कारण कम उम्र में मर गए थे। उत्तरी थाइलैंड में एक पूरे गाँव को विधवाओं का गाँव कहा जाता है, क्योंकि वहां पर काफी लोग इस बीमारी की वजह से मर गए थे। सिलिकोसिस फेफड़ों की एक लाइलाज बीमारी है, जो धूल में मौजूद मुक्त सिलिका के कणों को अंतःश्वसन करने के कारण होती है। यह बीमारी होने के बाद इसमें सुधार होने की संभावना नहीं रहती मगर इस रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है। यह रोग सिलिका मिश्रित धूल के संपर्क के कारण होता है। इसलिए व्यक्ति जितने लम्बे समय तक सिलिका मिश्रित धूल केसंपर्क में रहता है, उतना ही अधिक इस रेाग के चपेट में आता है। इस रोग से वे लोग अधिक प्रभावित होत हैं जो सिलिका मिश्रित धूल के संपर्क में आते हैं और ऐसा तभी होता है। जब उनका कार्य स्थल ऐसा हो, जहाँ पर उन्हें चट्टानों को तोड़ना हो, रेत एकत्रित करना हो, पत्थर, अयस्क आदि को तोड़ना या बारीक चूरा करना शामिल होता है। इन सभी कार्यों मे सिलिका उत्सर्जित होती हैं इसके अतिरिक्त खदानों , कांच के कारखानों, मृत्तिका आदि जगहों पर होने वाले कार्यो में भी सिलिका मिश्रित धूल के कणों के संपर्क में आते है।

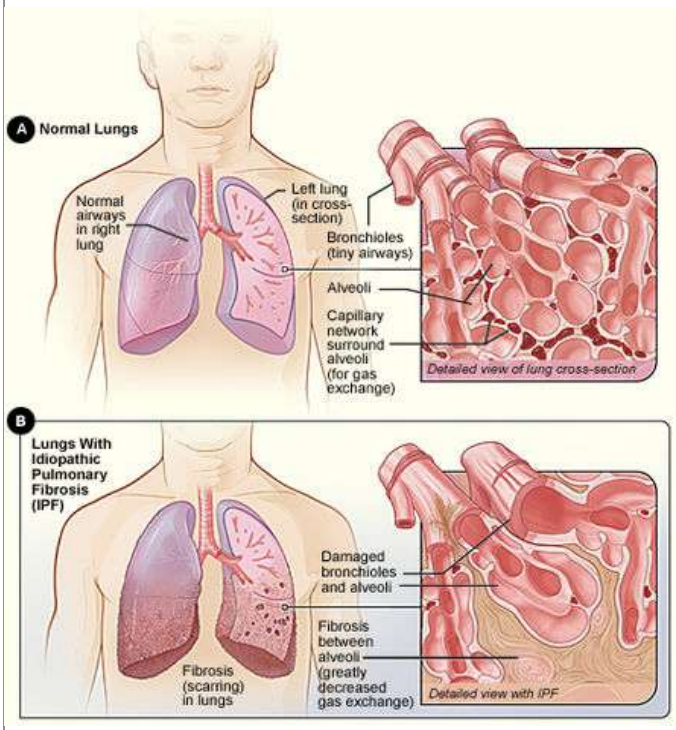

बालू विस्फोट एक सबसे खतरनाक प्रक्रिया है।, जिसमें सिलिकोसिस होने का सबसे अधिक खतरा रहता है। तीव्र विस्फोट में अगर निकलने वाले मलबे में सिलिका हो तो सिलिकोसिस होने की संभावना रहती है। सूखी खुदाई, रेत या कंक्रीट को साफ करना, दबाव में वायु का प्रयोग आदि जैसी प्रक्रियाएं धूल के बादलों का निर्माण करते हैं। ये धूल के बादल श्वसन से फेफड़ों तक सिलिका पहुँचाने में सहायक होते हैं।

सिलिकोसिस के कारण फेफड़ों में

तन्तुमयता और वातस्फिति होती है। सिलिकोसिस का प्रकार और उसकी उग्रता इस बात पर निर्भर करती है कि सिलिका के संपर्क में रोगी कितने समय तक रहा है। सिलिकोसिस जीर्ण, त्वरित और तीक्ष्ण आदि रूप में पहचाना जाता है। इस रोग में संकटमय स्थिति असमर्थता और मृत्यु के रूप में प्रकट होती हैं। अक्सर सिलिकोसिस से मौत का करण सिलिकोसिस के साथ फेफड़ो का तपेदिक होता है और इसे सिलिको-तपेदिक कहते हैं। श्वसन के कार्यों की क्षमता में कमी बड़े पैमाने पर तन्तुमयता और वातस्फिति होने से होती है। इसके साथ कभी-कभी दिल का दौरा भी मौत का कारण बनता है।

हमारे देश में अग्रणी भूमिका निभा रहा हैं हाल ही में इस संसान ने राजस्थान के करैली जिले में 101 लोगों की जांच में पाया कि उनमें से 78.5 प्रतिशत लोग सिलाकोसिस पॉजिटिव थे। माइन लेबर प्रोटेक्शन कम्पैग्न ट्रस्ट ने भी

जोधपुर में 987 सिलोकोसिस पॉजिटिव मामलों को चिह्नांकित किया था। सिलोकोसिस का शीघ्र निदान कर पाना डॉक्टरों के लिए कठिनाई का विषय होता हैं, क्योंकि इसके लिए उन्हें प्रशिक्षण और विशिष्टता की जरुरत होती है और सिलिकोसिस के लक्षण तपेदिक से बहुत ज्यादा मिलते-जुलते होने से गलत निदान होने की संभावना बनी रहती है।

सिलोकिसस की रोकथाम के लिए नियोक्ता द्वारा किये जाने वाले उपाय-

• वायु में स्फटिक सिलिका की नियमित सिलिका की नियमित जांच करना सिके संपर्क में खनिक रहते हैं।

• स्फटिक सिलिक के संपर्क को कम करने के लिए गीली खुदाई करवाना, सिलिका के निकास के लिए स्थानीय खुलपव करना तथा धूल के उतसर्जन को कम करना।

• कर्मचारियों को सुरक्षात्मक कपड़े, मास्क , फव्वारे आदि मुहैया कराना।

• कर्मचारियों को सिलिका और उसके स्वास्थ्य पर होने वाले खतरे से आगाह करना।

• कर्मचारियों को सुरक्षा के सामान के सही उपयोग हेतु प्रशिक्षण देना।

• निर्देश चिन्हों को प्रयोग करना जिससे कर्मचारियों को सिलिका और उसके जोखिम से अवगत करना।

• समय-समय पर कर्मचारियों की स्वास्थ्य जांच करवाना। सारे सिलिकासिस पॉजिटिव मामलों की सूचना स्वास्थ्य विभाग को देना।

इन उपायों को यदि हर नियोक्ता अपनाये तो हम सब मिलकर इस खतरनाक रोग को अपने समाज से दूर हटा पाएंगे और एक स्वस्थ समाज के निर्माण में अपनी भूमिका का निर्वाहन कर सकेंगे।

sachin@vigyanprasar.gov.in

श्वसन रोगों के निदान में रेडिओलॉजी की भूमिका

- डा० सतीश त्रिपाठी
रेडियोलॉजिस्ट

अगर आप किसी श्वसन रोग विशेषज्ञ की क्लीनिक पर जायें तो आपको ज्यादातर लोगों के हाथ में सीने के एक्सरे का एक लिफाफा मिल जाएगा। आँकड़ों के अनुसार विश्व में सबसे ज्यादा एक्सरे सीने का ही होता है। अतः आज हम आपको सीने के एक्सरे द्वारा श्वसन रोगों के निदान के बारे में आपके मन में उठ रहे संभावित प्रश्नों के उत्तर दे रहें है।

प्रश्न :- सीने का एक्सरे क्यों कराया जाता है?

उत्तर :- जब श्वसन रोग विशेषण को आले द्वारा सीने की जाँच करने पर किसी रोग की आशंका होती है या किसी प्रकार की खांसी या बुखार दो सप्ताह से अधिक का हो तो सीने का एक्सरे कराते हैं।

प्रश्न :- सीने का एक्सरे कराते समय क्या सावधानियां लेनी होती है? क्या इसके लिए खाली पेट होना जरूरी है?

उत्तर :- सीने के एक्सरे के लिए आपको खाली पेट आने की आवश्यकता नहीं होती है। केवल पेट के एक्सरे में आपको खाली पेट आना होता है। एक्सरे होने वाले दिन आप ढीले और सूती कपड़े पहन कर जायं। महिलाओं के वस्त्र में किसी प्रकार का जारी या मोती नहीं लगा होना चाहिए। जब एक्सरे टेक्नीशियन आपको सांस रोकने को कहें तो सीने में पूरी सांस भर कर रोक लें और क्लिक की आवाज होने या टेक्नीशियन के कहने पर छोड़ दें।

प्रश्न :- क्या एक्सरे की किरणों का शरीर पर कोई हानिकारक प्रभाव होता है।

उत्तर :- हाँ होता है लेकिन बहुत कम। आप यो समझ लें की यदि आप पेस्टिसाइड लगी सब्जियां या फल खाते है या सड़क पर वाहन के निकलते धुएं के बीच चल रहे है उससे कम ही होता है। लेकिन इससे फायदा यह होता है कि आपकी बिमारी का निदान हो जाता है और आपका रोग जल्द ठीक होने लगता है।

प्रश्न :- किन-किन सांस की बिमारियों में सीने के एक्सरे की सलाह दी जाती है और उसका निदान कैसे करते हैं?

उत्तर :- कई तरह की बिमारियों का निदान सीने के एक्सरे द्वारा किया जाता है। मुख्यतः निमोनिया, टी०बी०, दमा फेफड़े में पानी आ जाना, बच्चों के सीने में ग्लैंड की उपस्थिति। फेफड़े में गाँठ या कैंसर आदि रोगों का निदान एक्सरे द्वारा किया जाता है।

प्रश्न :- एक्सरे टेक्नीशियन अपने सीने पर एक प्लास्टिक का बैज लगाए रहते हैं, वह किसलिए लगाते हैं? उससे क्या एक्स किरणों से सुरक्षा मिलती है?

उत्तर :- एक्सरे टेक्नीशियन अपने सीने पर जो बैज लगाए रहते हैं उसे फिल्म बैज कहते हैं। उससे एक्स किरणों की मात्रा उस अवधि में लैब में नापा जाता है और उसी के अनुसार सुझाव दिया जाता है। उससे किसी प्रकार की सुरक्षा नहीं होती है।

प्रश्न :- गर्भवती महिलाओं के सीने के एक्सरे में क्या कोई सुरक्षा ली जाती है?

उत्तर :- हाँ उनका एक्सरे पेट के ऊपर एक लेड का एप्रन रख कर करते हैं। इसके लिए चिकित्सक को पर्चे पर लिख देना चाहिए या फिर मरीज को स्वयं एक्सरे टेक्नीशियन को बता देना चाहिए।

प्रश्न :- कभी-कभी श्वसन रोग विशेषज्ञ सी०टी० की राय देते है। उससे क्या पता चलता है?

उत्तर :- कभी-कभी कुछ रोग और उसकी सूक्ष्म जटिलताएँ एक्सरे में नहीं दिखाई देती, जो कि हाई रेजूलेशन सी०टी० में आसानी से दिखाई देती है। क्योंकि इसमें सीने का विभिन्न कोणों से एक साथ एक्सरे किया जाता है। इसे टोमोग्राफी भी कहा जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्वसन रोगों के निदान और उसके ठीक होने की प्रगति की जानकारी के लिए रेडियोलॉजी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है।

- एक्स-रे निदान केन्द्र
बेतियाहाता, गोरखपुर

uo o"k dh gkfnd 'kHkdkeuk;----

नारायण चिकित्सालय

Saurabh Nidan Kendra

(A Unit of Narayan Chikitsalaya)

तुर्कमानपुर (टैक्सी स्टैण्ड के पास), गोरखपुर

MkO lR;kuUn dfM;k
एम.डी. (मेडिसिन)

MkO et dfM;k
एम.डी. (पैथ.)

MkO ljfHk dfM;k
एम.एस. (गाइनी)

प्रसूति एवं पैथालॉजी सम्बन्धी सभी जाँच एवं सुविधाएं उपलब्ध हैं।

फोन : 0551-2347180, 7408967836

टी०बी० का बढ़ता कहर

- डा० सोनल अग्रवाल
एम०बी०बी०एस०, एम०बी०ए०

टी०बी० (तपेदिक/चस्मा) रोग वयस्को में मौत का प्रमुख कारण है। 5-6 दशको पूर्व टी०बी रोग का उपचार उपलब्ध नहीं था। टी०बी० के मरीजो को अक्सर घर से निकाल दिया जाता है। फिर टी०बी० का उपचार विकसित हुआ, आशा की नयी किरण जागी, लगा कि मानव ने टी०बी० पर विजय प्राप्त कर ली है पर यह खुशफहमी ज्यादा जागी, लगा कि मानव ने टी०बी० पर विजय प्राप्त कर ली है, पर यह खुशफहमी ज्यादा समय नही रही। धीरे धीरे टी०बी० जीवाणु दवाओं के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने लगे जिससे दवाएँ निष्प्रभावी होने लगी, अब अनेक टी०बी० के मरीजो में अनेक टी०बी० की औषधियॉ कार्य नही करती । साथ ही एडस रोब के बढते प्रकोप ने रोग को नया समाप्त हो जाती है। इनमें टी०बी० जीवाणु एडस मरीजो में गंभीर रोग अख्तियार कर सकते है। टी०बी० रोग के बढ़ते प्रकोप और नये रौद्र रूप को देखते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लू०एच०ओ०) ने टी०बी० को विश्वव्यापी आकस्मिकता (Global Emergency) घोषित किया है। अर्थात यदि टी०बी० पर नियन्त्रण के लिए प्रभावी प्रयास नही किए गये तो यह मानव अस्तित्व के लिए खतरा बन जाएगा।

गरीबी और टी०बी०:- टी०बी० रोग माइक्रोबैक्टीरियम दुयबर कुलाई नामक बैक्टीरिया के संक्रमण से होता है। वैसे तो यह जीवाणु किसी भी व्यक्ति को संक्रमित कर सकता है पर पुराने समय से ही इसका प्रकोप गरीबो में ज्यादा होता है। अनेक अध्ययनो से ज्ञात हुआ है कि गरीबो, बेघर, मलिन बस्तियों, के निवासियों मानसिक तनाव ग्रस्त, नसेड़ियों, कुपोषित और भीड़ वाले स्थानो, सकरी गलियों में रहने वालो में टी०बी० के गिरफत मं आने की ज्यादा संभावना होती है। गरीब व्यक्ति, गरीब समाज, गरीब देशो में टी०बी० का प्रकोप ज्यादा होता है, रोग ग्रसित जटिल चक्रव्यूह में फंस जाता है, रोग के कारण कार्यक्षमता कम होने, कार्य न करने इलाज में खर्च के कारण गरीब और ज्यादा गरीब हो जाते है पूरे परिवार की हालत दयनीय हो जाती है। रोग का प्रकोप ज्यादा होने पर उस क्षेत्र देश का विकास प्रभावित होता है।

अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि लगभग 95 प्रतिशत टी०बी० रोग का प्रकोप विकासशील, अविकसित देशों में होता है यहॉ पर 75 प्रतिशत टी०बी० के कारण होने वाली मौते, युवावस्था में होती है।

गरीबी के कारण समस्याएँ :- किसी समाज में

गरीबी प्रति व्यक्ति आय और उनकी मूल जरूरतों की पूरी होने पर निर्भर की जाती है। यदि किसी व्यक्ति की आय देश में निर्धारित गरीबी रेखा से कम होती है, जिससे उसके पर्याप्त मात्रा में भोजन और अन्य मूल आवश्यकताओं की पूर्ति नही हो पाती तो बी०पी०एल० श्रेणी में आते है। गरीबी के कारण बच्चों को शिक्षा नहीं मिल पाती है पर्याप्त मात्राा में संतुलित भोजन न मिलने से कुपोषण गस्त हो सकते है। यह व्यक्ति गंदी मलिन बस्ती में रहने के लिए मजबूर होते है। गरीबो में जागरूकता ज्ञान की कमी होती है। यह अपने अधिकारों कर्तव्यों को भी नहीं जानते । इनमें आत्म सम्मान, आत्मविश्वास की कमी हो सकती । यह स्वस्थ, दीर्घ जीवन, व्यतीत नही कर पाते। इसनके विभिन्न संक्रमण रोगा तथा टी०बी० की चपेट में आने की प्रबल संभावना होती है।

देश में टी०बी० की समस्याः- विश्व के कुल टी०बी० मरीजो के करीब 30 प्रतिशत भारत में है। आबादी वृद्धि के साथ ही प्रकोप बढ़ रहा है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि हर आयु के करीब 35 प्रतिशत व्यक्ति देश में टी०बी० संक्रमित है। इनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होने पर कभी भी टी०बी० रोग स्पष्ट हो सकता हैं। देश में आयु बढ़ने के साथ ही टी०बी० संक्रमित व्यक्तियों की सख्या बढ़ती जाती हैं अनुमान है कि 40 वर्ष आयु से ज्यादा के करीब 70 प्रतिशत टी०बी० संक्रमित हो जाता है देश में उत्पादक आयु 15 से 55 वर्ष मानी जाती है इस आयु वर्ग

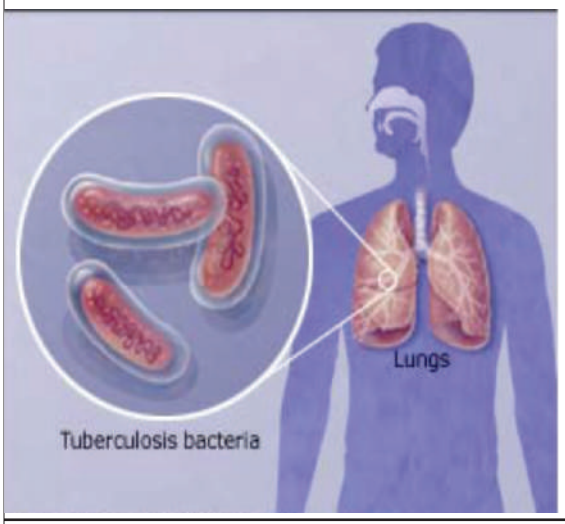

के एक व्यक्ति की प्रति मिनट टी०बी० के कारण मौत हो जाती है। प्रति वर्ष लगभग 20 लाख व्यक्ति टी०बी० के शिकार हो जाता है।

टी०बी० के मरीजो और परिवार पर आर्थिक प्रभाव :- टी०बी० मरीज बीमारी के कारण कार्य करना बंद करना पड़ता है, यदि पहले से बचत नहीं है तो हालत दयनीय हो जाती है, साथ ही उपचार में व्यय करना पाड़ता है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि टी०बी० ग्रसित होने पर 75 प्रतिशत ग्रामीण इलाके में और 67 प्रतिशत शहरी इलाके के लोगों को ऋण लेना पड़ता है। यह व्यक्ति फिर इस चक्रव्यूह से निकल नही पाते ।

रोगियो से घर में दुर्व्यवहार हो सकता है घर से निकाला जा सकता है। यदि माता/पिता टी०बी० की चपेट में आ जात है तो करीब 15 प्रतिशत बच्चो का स्कूल बंद हो जाता है, 8 से 10 प्रतिशत को रोजी रोटी कमाने के लिए धंधा या नौकरी करने को मजबूरी होती है अनुमान है कि देश में टी०बी० के कारण हर वर्ष देश में 13 हजार करोड़ से ज्यादा का नुकसान हाता है। टी०बी० के कारण माता/पिता की मौत के कारण करीब 3 लाख बच्चे प्रतिवर्ष अनाथ हो जाता हैं करीब एक लाख महिलाएँ घर से निकाल दी जाती है।

टी०बी० के मरीज के कारण उपचार टालते है या आधा अधुरा कराते है।

सुझाव :- टी०बी० हर वर्ग में होती है पर इसका कहर, गरीबो पर ज्यादा होता है। टी०बी० का सफल उपचार ज्यादातर में संभव है। भारत सरकार टी०बी० की मुक्त जॉच, उपचार के लिए हर जिले में डाटस केन्द्र (DotS) खोले है जहॉ पर टी०बी० के निदान और दवाओं की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। टी०बी० ग्रस्त होने पर यदि इन केन्द्रो में उपचार करवाया जाता है तो , सही उपचार होता है ऋण नहीं लेना पड़ता, घर में भुखमरी नहीं होती है। जीवन की गुणवत्ता बेहतर होती है।

टी०बी उपचार और बचाव के लाभ :- टी०बी संक्रामक रोग है। टी०बी० का टीका बी०सी०जी०, ओ०बी संक्रमण रोकने मे पूर्णत प्रभावी नही है। अतः टी०बी० को फैलने से रोकने को एक मात्र तरीका है, टी०बी० मरीजो की

शीघ्र से शीघ्र पहचान कर उनका प्रभावी उपचार करना है जिससे रोग दूसरों में फैलने का खतरा कम हो जाए ।

टी०बी० दीर्घकालीन रोग है, इयके परिवार के साथ ही समाज, देश पर गंभीर दुष्परिणाम होत है टी०बी० पर नियन्त्रण करने से निम्न लाभ होंगे ।

- टी०बी रोगियों और इसके कारण मरने वालो की संख्या मे कमी।
- बीमारी के कारण होने वाली उत्पादकता में कमी नही होगी।
- बच्चे, यूवा शिक्षा, प्रशिक्षण प्राप्त करेगें ।
- औसत आयु में वृध्दि होगी।
- काम काजी व्यक्तियों की संख्या में वृध्दि होती।
- स्वस्थ व्यक्ति परिवार का सही ढंग से लालन पालन कर सकता है।
- देश का तेजी से विकास होगा।
- गरीबी में कमी आएगी।

टी०बी० विकासशील और विकसित देशों में गंभीर समस्या है। विश्व में टी०बी० के सबसे ज्यादा रोग भारत में है। वैसे तो टी०बी० किसी वर्ग में हो सकती है, पर इसका प्रकोप गरीबो पर ज्यादा है। रोग की चपेट में आने पर गरीब और ज्यादा गरीब हो जाते है घर का सामान बिकने की नौबत आ सकती है। बच्चो की शिक्षा, प्रशिक्षण अधूरा रह जाता है। टी०बी० के दुष्प्रभाव अगली पीढ़ी में भ्झी होते है।

टी०बी० पर नियन्त्रण के लिए प्रभावी प्रयास कर आवश्यक है। रोग के नियन्त्रण के लिए जन साधारण में जागरूकता आनी आवश्यक है जिससे का निदान शुरूआती अवस्था में हो और वह अपना नियमित उपचार करें पूरा कोर्स, उपचार करें ।

रोग पर नियन्त्रण के लिए नयी प्रभावी दवाओं की खोज भी आवश्यक है।

– सरस्वती इंस्च्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, मेरठ

सामयिक नेहा के अनवरत 19 वर्षों के सफलतापूर्वक प्रकाशन पर शुभ शुभकामनाएं

डा. रीना श्रीवास्तव

L=kh ,oi lfr jkx foHkkx] ch0 vkj0Mh0 efMdy dkyt] xkj[kij

सामयिक नेहा के अनवरत 19 वर्षों के सफलतापूर्वक प्रकाशन एवं नव वर्ष 2018 की हार्दिक शुभकामनाएं

डा. राजीव अग्रवाल

एम0सीएच0 (न्यूरो सर्जरी)

फेफड़ों का कैंसर

- डा० अश्विनी कुमार मिश्रा
एम०डी० (चेस्ट)

फेफड़े हमारे शरीर के सबसे महत्वपूर्ण हिस्सों में से एक है। इसका काम शरीर के अन्य अंगों को आक्सीजन प्रदान करना है।

कैंसर कोशिकायें असामान्य कोशिकायें होती है। कैंसर की कोशिकायें स्वस्थ कोशिकाओं के मुकाबले अधिक तेजी से पैदा होती हैं तथा बढ़ती हैं। फेफड़ों का कैंसर तब होता है, जब फेफड़े की कोशिकायें परिवर्तित होकर असामान्य हो जाती हैं। वे रक्त अथवा लसीका (लिम्फ) के माध्यम से शरीर के अन्य अंगों तक फैल सकती है जिसे मेटास्टैसिस या कैंसर का फैलना कहते हैं।

फेफड़े का कैंसर विश्व में सर्वाधिक होने वाला कैंसर है।

पूरे विश्व में कैंसर से होने वाली मौतों में से फेफड़े में कैंसर का स्थान शीर्ष पर है। 2012 तक 18 लाख मरीज थे जिनमें से 13 फीसदी नये मरीज थे और उनमें 58 फीसदी कम विकसित क्षेत्रों के थे। विश्व में कैंसर से होने वाली मौतों में सर्वाधिक मौत फेफड़े के कैंसर से ही होता है। प्रत्येक 5 मौतों में एक मौत फेफड़े के कैंसर की वजह से ही होती है। विश्व में होने वाली सारी मौतों में 19.4 फीसदी मौत फेफड़े के कैंसर से ही होती है जो कि लगभग 20 लाख वार्षिक है। फेफड़े का कैंसर पुरूषों में होने वाला सबसे

प्रमुख कैंसर है और पुरूषों की तुलना में स्त्रियों में फेफड़े का कैंसर कम मात्रा में पाया जाता है। स्त्रियों में होने वाले कैंसर में फेफड़े का कैंसर चौथे क्रम पर आता है। स्त्रियों में होने वाले सारे कैंसर का 8.5 फीसदी कैंसर फेफड़े का कैंसर होता है। जो कि लगभग 7 लाख वार्षिक है। कैंसर के कारण स्त्रियों में होने वाले मौतों में फेफड़े का कैंसर दूसरे स्थान पर आता है। महिलाओं में होने वाले सारे कैंसर के कारण मृत्यु का लगभग 13.8 फीसदी मृत्यु फेफड़े के कैंसर की वजह से होती है।

भारत में भी फेफड़ों का कैंसर प्रमुख स्थान पर है। पुरूष में दूसरे व स्त्रीयों में तीसरे स्थान पर है। ग्रामीण निवासियों में बीड़ी के अधिक प्रचलन के कारण ज्यादा संख्या में फेफड़े के मरीज बढ़ रहे हैं। भारतवर्ष में सन 2008 में 54000 पुरूष और 15000 महिलायें फेफड़े के कैंसर का शिकार हो गये और उनमें से 50 हजार पुरूष और 10 हजार महिलाओं की मृत्यु हो गयी। विकसित देशों में धूम्रपान में कमी होने और जागरूकता बढ़ने की वजह से फेफड़े के कैंसर सम्बन्धित मृत्युदर में कमी आयी है। जबकि विकासशील देशों में फेफड़े के कैंसर से सम्बन्धित मृत्यु में बढ़ोत्तरी हुई है। हमारे देश में फेफड़े के कैंसर के सही आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं एक अनुमान के अनुसार पिछले वर्ष 1 लाख पुरूष और 30 हजार महिलायें फेफड़े के कैंसर का शिकार हो गयी। लकड़ी के चूल्हे पर वर्षों तक खाना बनाने के वजह से बड़ी संख्या में महिलायें भी प्रभावित हो रही हैं।

फेफड़े के कैंसर के कारण :-

1. धुम्रपान एवं फेफड़े का कैंसर :- धुम्रपान फेफड़ों के कैंसर का प्रमुख कारण है। 75 प्रतिशत कैंसर उन्हीं व्यक्तियों को होता है जिन्होंने अपने जीवनकाल में कभी भी धुम्रपान करने वाले हर 9 लोगों में से एक को फेफड़े का कैंसर होता है। बीड़ी, सिगरेट इत्यादि के धुएँ में कई प्रकार के कार्सिनोजेन पाये जाते हैं जो कैंसर का कारण बनते हैं।

2. अन्य लोगों द्वारा धुम्रपान से प्रभावित क्षेत्र में सांस

लेना (पैसिव स्मोकिंग)।

3. एस्बेस्टॉस, रेडान गैस अथवा अत्याधिक वायु प्रदूषण के सम्पर्क में आना।

4. कुछ विशेष धातुओं के सम्पर्क में आना जैसे कि क्रोमियम, कैडमियम, आर्सेनिक।

5. कुछ विषाणु जैसे कि एच०पी०वी०, सी०एम०वी०।

6. वंशानुगत जीन संरचना। नजदीक की प्रथम डिग्री के रिश्तों में कैंसर की संभावना ज्यादा होती है।

लक्षण :- कैंसर के शुरूआती दौर में प्रायः मरीज में कोई लक्षण नहीं होते हैं। बीमारी के बढ़ने के साथ लक्षण आने लगते हैं।

- ❖ खांसी जो कि जल्दी समाप्त नहीं होती और समय के साथ बढ़ती जाती है।
- ❖ सीने में दर्द।
- ❖ खांसी में खून आना।
- ❖ सांस फूलना।
- ❖ भूख कम लगना।
- ❖ वजन कम होना।
- ❖ थकान होना।

कैंसर के प्रकार :- फेफड़े के कैंसर के दो मुख्य प्रकार है। प्रत्येक किस्म का कैंसर अलग प्रकार के कोशिकाओं से विकसित होता व फैलता है तथा उसका उपचार भी अलग प्रकार से किया जाता है।

1. स्माल सेल लंग कैंसर :- 15 प्रतिशत कैंसर इस प्रकार के होते हैं। इस किस्म का कैंसर तेजी से विकसित होता व फैलता है।

2. नॉन स्माल सेल लंग कैंसर :- यह फेफड़ों के कैंसर सर्वाधिक प्रचलित किस्म 85 प्रतिशत यह काफी धीमी गति से विकसित होकर फैलता है तथा स्मॉल सेल कैंसर की तुलना में धीमी गति पनपता एवं फैलता है।

निदान (डायग्नोसिस) :- 70 प्रतिशत फेफड़ों के कैंसर के मरीज का पता तब चलता है जब कैंसर अग्रसर हो चुका होता है एवं अन्य अंगों में फैल चुका होता है। अतः समय रहते इसका निदान एवं उपचार जरूरी है। फेफड़ें के कैंसर के निदान के लिए न सिर्फ उसका प्रकार जानना जरूरी है बल्कि वह किस स्टेज में हैं वह भी पता करना पड़ता है ताकि उचित ईलाज किया जा सके।

निम्नलिखित जांचे की जाती है :-

- ❖ सीने का एक्स-रे।
- ❖ सीने की कम्प्यूटराइज्ड टोमोग्राफी (सी०टी०) स्कैन।
- ❖ पॉलिट्रान एमिसन टोमोग्राफी (पेट स्कैन)।
- ❖ बलगम में कैंसर सेल की जांच।
- ❖ फेफड़ें के गांठ की बायोप्सी।

ब्रांकोस्कोपी :- इस जांच के द्वारा फेफड़े के अंदरूनी संरचना देखी जा सकती है। ऐडोस्कोपी के समान एक पतली ट्यूब नाक या मुंह के रास्ते डाली जाती है एवं कोशिकाओं के नमूने एकत्र किये जाते है जैसे कि टी०बी०एन०ए० (ट्रांस ब्रांकियल निडिल एस्प्रेशन), टी०बी०बी० (ट्रांस ब्रांकियल बायोप्सी), बी०ए०एल० (ब्रांको एल्वीओलर लावाज), ई०बी०यू०एस०।

उपचार :- फेफड़ों के कैंसर का इलाज जितना जल्दी शुरू किया जाये उतने बेहतर परिणाम होते हैं। फेफड़े के कैंसर का उपचार इस पर निर्भर करता है कि कैंसर किस प्रकार है और यह कितना फैला है।

कैंसर का उपचार तीन तरीकों से किया जाता है-

- ❖ शल्य चिकित्सा (सर्जरी)
- ❖ विकिरण चिकित्सा (रेडियोथेरैपी)
- ❖ रसायन चिकित्सा (कीमोथेरैपी)

फेफड़ों के कैंसर का इलाज ट्यूमर के आकार, स्थान, प्रसार की गति और रोगी के सामान्य स्वास्थ्य पर निर्भर करता है।

शल्य चिकित्सा :- सर्जरी नॉन स्माल सेल लंग कैंसर के इलाज के लिए सबसे अच्छा विकल्प है यदि वह प्रारंभिक अवस्था में है तथा ट्यूमर को निकाला जा सकता है।

सर्जरी के प्रकार :- वेज रिसेक्सन, लोबेक्टमी, स्लीव

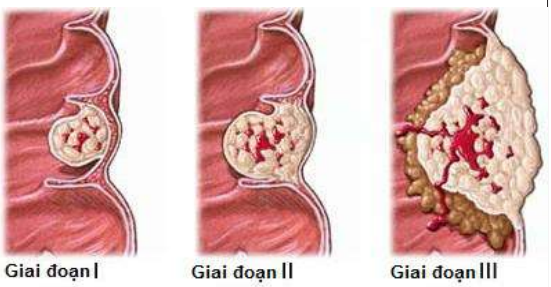

रिसेक्सन, न्यूमोनेक्टमी।

विकिरण चिकित्सा (रेडियो थेरैपी) :- यह कैंसर उपचार का दूसरा तरीका है। वे रोगी जिनमें शल्य चिकित्सा संभव नहीं है उनका इलाज कीमोथेरैपी और रेडियो थेरैपी के द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता है।

रसायन चिकित्सा (कीमोथेरैपी) :- नसों में इन्जेक्शन के द्वारा दी जाने वाली कैंसर रोधी दवाईयां कैंसर के फैलाव को रोकती है।

फेफड़े के कैंसर के निदान के क्षेत्र में आई कुछ नवीनतम विधियाँ :-

1. टारगेटेड थेरेपी :- कैंसर जिन कोशिकाओं से पनपता है उनके जेनेटिक संरचना के आधार पर कुछ दवाओं को आविष्कार किया गया है जो परंपरागत कीमोथेरेपी की तुलना में अधिक कारगर है। इससे कीमोथेरेपी से होने वाले दुष्प्रभाव भी काफी कम हो जाते हैं।

2. ब्रांकोस्कोपीक तकनीक :-

❖ **ई०बी०यू०एस० ऐडो ब्रोंकियल अल्ट्रा सोनोग्राफी:-** इस तकनीक में सामान्य ब्रांकोस्कोप से भिन्न एक अल्ट्रासाउण्ड प्रोब लगा होता है जिससे की सांस की नलिकाओं की समीप स्थित कैंसर के गांठों (लिंम्फ नोड) की जांच की जा सकती है। सामान्य ब्रांकोस्कोपी की तुलना में इस तकनीक द्वारा अधिक मरीजों का निदान हो सकता है।

❖ कुछ अन्य तकनीक जैसे की ऑटो-फ्लोरोसेंस ब्रांकोस्कोपी के द्वारा कैंसर का पता शुरूआती दौर में ही लगाया जा सकता है जिससे की मरीज की आयु बढ़ायी जा सकती है।

❖ क्रायोथेरेपी, ब्रैकीथेरेपी एवं एलेक्ट्रोंकॉटरी कुछ अन्य

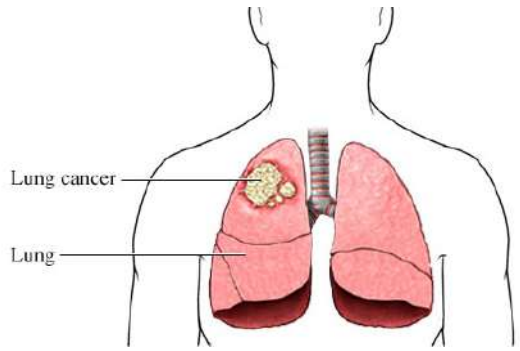

नए तकनीक हैं, जिससे की सांस की नलिकाओं के अंदर स्थित छोटे ट्यूमर को आसानी से निकाला जा सकता है।

बचाव :- फेफड़े के कैंसर का बचाव मुख्यतः धूम्रपान कम करने, छोड़ने एवं रोकने से हो सकता है। धूम्रपान बन्द करने से लगभग 15 वर्ष बाद मरीज के फेफड़े में हुए सभी धूम्रपान संबंधित दुष्प्रभावों को खत्म किया जा सकता है एवं फेफड़ों के कैंसर होने का खतरा भी लगभग खत्म हो जाता है। निम्नलिखित उपायों को अपनाकर धूम्रपान रोकने का प्रयास किया जा सकता है।

1. धूम्रपान वाले उत्पादों पर टैक्स की बढ़ोत्तरी कर देनी चाहिये।
2. स्वास्थ्य संबंधी दिक्कतो को बताना चाहिए।
3. इसके अंदर निकोटीन की मात्रा को कम कर देना चाहिए।
4. धूम्रपान संबंधी सार्वजनिक पॉलिसी को लाना चाहिए।
5. लोगों को इससे बचाने के लिये प्रेरित करना चाहिए।
6. इनका साइकोलाजिकल उपचार देना और जरूरत पड़ने पर दवा संबंधी उपचार करना चाहिए।
7. धूम्रपान करने वाला व्यक्ति तब तक चिकित्सक के पास नहीं जाता जब तक कि उनको कोई स्वास्थ्य संबंधी अवरोध नहीं होता है तो इसके लिए धूम्रपान रोधी प्रचार करना आवश्यक है। जैसे कि-

❖ स्कूलों में बच्चों का प्रोग्राम।
❖ कार्यालयों में कम्यूनिटी प्रोग्राम।

- शेष पृष्ठ 17 पर....

दमा : भ्रान्त धारणाएं और तथ्य

डा० विमल कुमार मोदी
एम०डी०, एन०डी०

दमा के संबंध में भ्रान्त धारणाएं हैं, यहां हम उनके संबंध में कुछ स्पष्टीकरण करना चाहेंगें।

भ्रान्त धारणा : दमा एक मनःशारीरिक रोग है। भावनाएं उसके लिए कारण- रूप हैं।

तथ्य : दाब (स्ट्रेस) तथा भावनात्मक हड़बड़ी के फलस्वरूप दमा उभर सकता है, लेकिन ऐसे स्थिति उसी में आयेगी जो दमा का रोगी है। अध्किांश स्थिति में दमा के फलस्वरूप अनेक भावनात्मक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं- भावनात्मक समस्याएं दमा के लिए कारण-रूप नहीं होती।

भ्रान्त धानणा : दमा एक शिशु-रोग है।

तथ्य : यद्यपि बच्चों को दमा से ग्रस्त प्रायः देखा जाता है, पर अनेकों व्यस्क भी उससे ग्रस्त देखने को मिलेंगे को मिलेंगे। कुछ में यह विकृति पहले-पहल शैशवावस्था में ही देखने को मिलती है।

भ्रान्त धरणा : दमा से ग्रस्त बच्चों में अन्तगोत्वा समस्याएं बेहतर बढ़ जाती है।

तथ्य : दमा जीवन की एक समस्या है। उसका दौरा जल्दी-जल्दी भी आ सकता है। और, बच्चे के बड़े होने पर पूर्णतः समाप्त हुआ भी लग सकता हैं पर, बाद में किसी भी समय उसके प्रकट होने की आशंका रहती है।

भ्रान्त धारण : दमा के रोगी के लिए सबसे सही स्थान वह है, जहां की आबोहवा सूखी
और गरम हो।

तथ्य : दमा के रोगी के लिए स्थान का चुनाव करने के लिए इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि किन परिस्थितियों में सम्बन्धित व्यक्ति में दमा का कष्ट बढ़ता है। ऐसे भी रोगी मिलेंगे, जिनको मरूभूमि की अपेक्षा समुद्री हवा अथवा ऊंचे पर्वतीय स्थल अध्कि रास आते हें।

भ्रान्त धारणा : दमा का निरोध सम्भव नहीं है।

तथ्य : जिनको पहले दमा हो चुका हो या जिनके लिए दमा से गस्त होने की आशंका हो, उनमें दमा का विकास रोका जा सकता है। इसके लिए बड़ी सर्तकता से उस व्यक्ति का भोजन बचपन में ही चुनना होगा। उसे यदि 'हेडे'-ज्वर हो जाये तो उसका सही उपचार करना होगा और अन्य एलर्जियों से उसे मुक्त रखना होगा।

भ्रान्त धारणा : दमा का दौरा पड़ने पर अति उग्र दवाओं से ही उस पर काबू पाया जा सकता है।

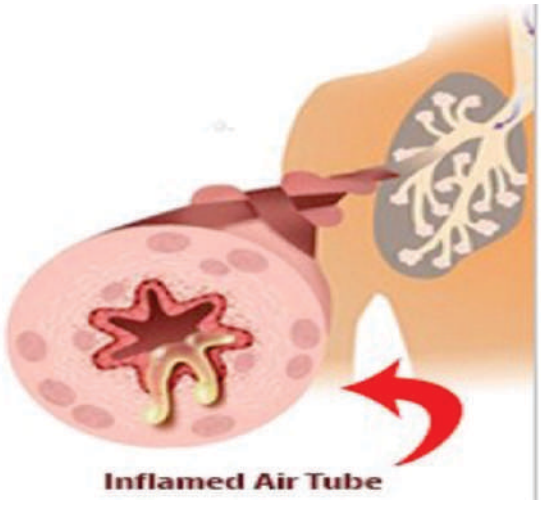

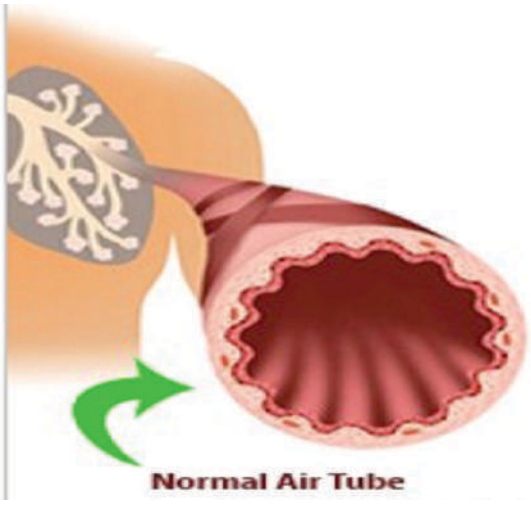

तथ्य : दमा के दौरे से मुक्ति के लिए उन कारणें का उपचार करना चाहिए, जिनके फलस्वरूप दौरा पड़ा हो। उन्य हानिहीन चिकित्साएं, जैसे- 'बायोफीड बैंक अथवा श्वसन - संबंधी व्यायाम से दमा के दौरे की उग्रता कम हो जाती है।

भ्रान्त धारण : दमा का रोगी व्यायाम के लि सर्वथा अशक्य होता है।

तथ्य : दमा के रोगी के लिए भी व्यायाम उतना ही आवश्यक है जितना किसी अन्य व्यक्ति के लिए। बल्कि यह कहिए कि साधारण व्यक्ति से अधिक आवश्यक है। अनेक खेल-कुद में दमा का रोगी बड़ी सरलता से भाग ले सकता है। 1972 की गर्मियों में जो ओलम्पिक हुआ था, उसमें तैरने से सम्बद्ध प्रतियोगिता में 5 स्वर्ण पदक दमा के रोगियों को मिले थे।

हमने दमा से सम्बन्धित कुछ अति प्रचलित भ्रान्त धारणाओं का उल्लेख ऊपर किया है। श्वसन-सम्बन्धी इस कष्ट से मुक्ति पाने में ये धारणाएं बाधा प्रसतुत करती हैं।

दमा एक अति रोग है और सभी देशों में सभी उम्र, वर्ग के लोग इससे पीड़ित देखने को मिलेंगे।

कुछ रोगियों को तो यह रोग सर्वथा अशक्त कर देता है। इसका दौरा पड़ने पर बच्चे न तो स्कूल जा पाते हैं और न वयस्क अपने काम पर जा पाते हैं और न व्यस्क अपने काम पर जा पाते हैं अनेक रोगियों को इसके कारण बार-बार अस्पताल में भर्ती होना पड़ता हैं पर, आज चिकित्सा-सविज्ञान ने इस रोग प्रकृति को सही-सही समझ लिया है और इसके निदान तथा उपचार की विधियां अधिक उन्नत हो गयी है। आज दमा के अधिकांश रोगियों को अपना कार्यकलाप छोड़ना नहीं पड़ सकता हैं तथ्य यह है कि अधिकांश दमा के रोगी आज साधारण जीवन बिता सकते हैं। बहुत ही कम को आजीवन इसके कष्ट की नौबत रह सकती है।

दमा का कारण

दमा का उल्लेख अर्वाचीन चिकित्सा-विज्ञान के पिता यूनान-निवासी हिप्पोकेटस ने भी किया है। यह हांफने या दम फूलने के दौरे की स्थिति है। उसके अनेक कारणों में से कुछ निम्नलिखित हैः-

• मांसपेशियो का आकुंचन या श्वसन-नलिका में ऐंठन या अति आकुंचन।

• श्वसन-नलिका की श्लेष्मा झिल्ली मं सूजन आना और उसके फलस्वरूप श्लेष्मा के आध्क्यि के फलस्वरूप ब्रांकियल नलिका में अवरोध उत्पनन होना।

इन आसाधारण स्थितियों के फलस्वरूप फेफड़ों में हवा का आवागमने कम हो जाता है। पिन होल के माप के छिद्र के द्वारा जब दमा का रोगी हवा को ग्रहण करने के लिए संघर्ष करता है, तो इस विकृति के फलस्वरूप श्वासें छोटी होती हैं। और , रोगी को खांसी आती है तथा श्वास लेने की प्रक्रिया में घर-घराहट की, सीटी बजने की तथ खडखड़ाहत की आवाजें आती हैं।

दौरे के समय फेफड़ो से निकलने की अपेक्षा हवा फेफड़े में अधिक आसानी से जाती है। इसके फलस्वरूप फेफड़े में कुछ हवा संगृहीत रह जाती हैं इसका फल यह होता है कि फेफड़ फैला जाता है। यदि कोई उपचार न किया जाय, तो भी दौरा कुछ मिनटों, कुछ दिनों या कुछ सप्ताहों में स्वयं समप्त हो जायेगा। वर्षो से इस रोग से ग्रस्त रहने के फलस्वरूप फेफड़े के हवा-कोष में जब अधिक खिंचाव रह जाता है, तब उनका लचीलापन घट सकता है और वे व्यर्थ हो सकते हैं। ऐसी स्थित में व्यक्ति 'एम्फीसीमा' अथवा जीर्ण रूपमें छोटी सांसो का भुक्त-भोगी हो जा सकता है।

दमा के रोगी केा 'हाइपरेसेंसिटिव ब्रांकल ट्री' होता है अर्थात् श्वसन-नालिकाओं का ऐसा जाल, जिसका उद्देश्य दूसारें के लिए अपघातक स्थितियों तथा चीजों के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया करना होता है। कुछ ऐसी चीजें ओर परिस्थितियां भी हैं, जिनके कारण दमा का दौरा पड़ सकता है- यथा, कुछ फूलों के पराग या गंध एक है) सिगरेट का धुंआ, औधोगिक रसायन, धातुओं के चूरे, आटा, कुछ दवाएं (जिनमें एस्पिरीन भी है), नाक, गलारे या 'साइनस' का 'इन्फेक्शन' कुछ खाद्य पदार्थ, ठंडी हवा से प्रतिक्रिया तथा भावनात्मक उथल-पुथल।

दमा का रोग बच्चा अपने मां-बाप से भी प्राप्त कर सकता है। उसका किंचित पैतृक कारण रहने पर अवसर पाकर वह गम्भीर रूप ले सकता है। पर्यावरण भी दमें के रोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चों में दमा के लिए

कारण-स्वरूप 'एलर्जी' भी एक है।

किसी आहार विशेष के प्रति 'एलर्जी' बच्चे में दमा उभारने के लिए कारण-रूप हो सकता है और चिकित्सकों का कहना है कि जिस परिवार के लोग 'एलर्जी' के शिकार हों, उस परिवार के शिशुओं को कोई बाहरी आहार नहीं देना चाहिए। उन्हें मात्र मां के दूध पर कम-से-कम छह महीने तक रखना चाहिए। ठोस आहार उसमें दमा उत्पन्न कर सकता है।

जो बच्चे 'हे' -ज्वर से ग्रस्त हुए रहते हैं, उनके लिए बाद में दमे की आशंका बहुत रहती हैं ऐसे बच्चों को पराबों से बचाना चाहिए।

और, जो दमा से ग्रस्त है उसको उन कामों से बचना चाहिए, जिनके फलस्वरूप दमा को दौरा पड़ता हों। यदि किसी के लिए उसका व्यवसाय ही दौरे के लिए कारण- रूप हो तो उसे अपना व्यवसाय बदल देना चाहिए।

दमा को रोगी जिस कमरे में रखा जाये, उसमें ऐसी कोई चीज नहीं होनी चाहिए, जो कष्ट को उत्तेजन दे। उस घर में रहने वाले अन्य लोगों को घर में धूम्रपान नहीं करना चाहिए। रोयेंवाले अथवा डैनेवाले प्राणियों को नहीं पालना चाहिए चाहे वह पालतू पशु या पक्षी सदा रोगी के कमरे से बाहर ही रहता हो।

दमा के रोगी का शयनागार नित्य साफ करते रहना चाहिए। उस कमरे मं धूल पकड़ने वरली चीजें नहीं होनी चाहिए। ऊपर कम्कबल, रजाई, बालदार विस्तर या भूसा रोगी के कमरे में नहीं रखना चाहिए। सिंथेटिक या फोम के कारण कष्ट बढ़ने की आशंका नहीं होती।

जिन व्यक्ति को जुकाम हुआ हो, उसके सम्पर्क से दमा के रोगी को बचना चाहिए। ऐस्पिरीन या ऐस्पिरीन-युक्त कोई दवा उसे नहीं खानी चाहिए। उसे नियमित रूप में संतुलित आहार लेना चाहिए, खूब पानी पीना चहिए तकि पूर्ण विश्राम करना चहिए। दिन भर में 6 से 8 गिलास तक पानी से ब्रांकियल स्राव ठीला रहेगा और खुश्की दूर होती रहेगी।

दमा और व्यायाम

दमा के रोगी के लिए नित्य व्यायाम करना आवश्यक है। एक बार में मात्र एक-दो मिनट का व्यायाम करें। इससे वायु -नलिका के खुलने में सहायता मिलेगी। तैरा दमा के लिए बड़ा हितकार है। थोड़ा-बहुत फुटबाल, बोस्केट काल, टेनिस आदि भी खेला जा सकता है। यदि व्यायाम करते हुए श्वास का कष्ट बढ़े तो रोगी को तुरन्त तब तक विश्राम करना चाहिए जब तक कि कष्ट समाप्त न हो जाये और उसके बाद ही किसी क्रिया-कलाप में लगना चाहिए।

दमा के रोगी के लिए थिथिलन बड़ा लाभकारी है। श्वसन-संबंधी व्यायाम को रोज करने से दमा के रोगी को बड़ा आराम रहता है।

विशेषज्ञों का कहना है कि दमा के रोगी के बच्चे को अपेक्षा से कहीं अधिक बचाकर रखने की आवश्यकता नहीं होती। ऐसे बच्चों के प्रति स्नेह-प्रदर्शन का अर्थ उद्दण्डता मे वृद्धि नहीं माना जाना चाहिए। जो बच्चे दमें के कारण स्कूल जाने या खेल-कूद में भाग लेने में असमर्थ हों, उनमें भिन्न प्रवृतियां जगायी जानी चाहिए।

- आरोग्य मन्दिर, गोरखपुर

दमा : कारण और उसकी सरल चिकित्सा

- डा० विमल कुमार मोदी
एम.डी.,एन.डी.

'क्या आपने कभी दमा से पीड़ित रेगी देखा है?'

हाँ दमे से पीड़ित रोगी के लिए स्वास लेना कठिन होता है, दौरा पड़ने पर श्वास लेते समय उसकी छाती धौंकनी की तरह चलती है, कंठ से सीटी की सी आवाज निकलती है, लेटना उसके लिए कठिन होता है, बैठे-बैठे उनकी रात बीत जाती है, किसी तरह वे बैठी अवस्था में तकिये के सहारे थोड़ी झपकी लेता है, बोलना उसके लिए कठिन होता है।

'पर क्या यह हालत रोगी की एकाएक हो जाती है?'

नहीं पहले उसे सर्दी होती है, बार-बार होती है, सर्दी दवा से दबायी जाती है, फिर जुकाम होता है, अर्थात् रोज ही प्रायः या किसी समय कुछ समय के लिए हल्की सर्दी सी होती है। इसकी दवा चलने पर खांसी होती है। नाक और गले से कफ आने लगता है, कभी कुछ समय के लिए साफ हो जाता है और खांसी की दवा चलने पर खांसी चली-सी जाती है और दमे के दौरे पड़ने लगते हैं।

फिर तो खांसी बनी ही रहती है और दमे के दौरे का खांसी में परिणत होने पर कफ आने लगने पर दमें में राहत मिलती है। या ऐसी दवा लेने पर जिससे कफ सूख जाये, मस्तिष्क, गले और छाती में खुश्क तो छा जाती है, पर कुछ समय के लिए दौरे मुक्ति मिल जाती है।

फिर धीरे-धीरे दौड़ने लगते है। पहले साल-छह

महीने के अन्तर से, फिर महीने-दो-महीने के अन्तर से, फिर भी जल्द-जल्द और आगे तो यह रोज का ही कार्यक्रम बन जाता है। और तब नित्य भोजन की तरह सुबह-शाम या दौरे का आगमन देखकर तुरंत दवा लेनी पड़ती है।

'तो दमा क्या है?'

दमा केवल सर्दी, जुकाम, खांसी का बिगड़ा रूप है। सर्दी प्रकृति का वरदान है। सर्दी के रूपमें शरीर आपनी अतिरिक्त गंदगी-कफ निकालना चाहता है। प्रकृति की इस सहायता को न समझकर हम प्रसन्न नहीं, दुखी होते हैं और इससे मुक्ति पाने के लिए, सर्दी,जुकाम से मुक्ति पाने के लिए दवा लेते हैं। दवा नाक की गले की उन श्लेष्मिक कलाओं, झिल्लियों को , जो कफ निकाल रहीं होती हैं, सुखा देती हैं उनमें आकुंचन पैदा कर देती है, और कफ निकलना बंद हो जाता है। इस प्रकार हम प्रकृति का शरीर को स्वच्छ करने का एक प्रयत्न व्यर्थ कर देते हैं। फिर भी प्रकृति अपना वह तरीका हल्के तौर पर जुकाम-खांसी के रूपमें जारी रखती है। हम फिर भी समझ नहीं पाते और इस प्रयत्न को निष्फल करने के लिए उसे दबाने के लिए और कड़ी दवा लेते है, जो गले, नाक, श्वास-नलिका की झिल्लियों को और तीव्रता से सुखाती है फिर धीरे-धीरे संबंधित झिल्लियों में सूजन पैदा हो जाती है, जिसकी वजह से नाक, गले और श्वास-नलिका के रास्ते रुंध जाते हैं, उनसे हवा का आना-जाना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को ही जीर्ण या दायमी दमा कहा जाता है।

यदि हम शरीर को विष-मुक्त करने, कफ-मुक्त करने के प्रयत्न में सहायक हों, तो दमें का इलाज बहुत आसान है। और , उससे भी आसान है, दमा न होने देना। अर्थात होने पर उसका सही इलाज करना। सर्दी का सही इलाज वही है जो पशु-पक्षी कोई भी रोग होने पर अपनाते है।

'पशु-पक्षी बीमार पड़ने पर अपना इलाज करते हैं? भला क्या इलाज करते हैं?'

1. वे रोग तक भोजन बंद कर देते हैं। रोगमुक्त, कष्टमुक्त होने के बाद ही वे कुछ ग्रहण करते हैं।

2. रोगी होने पर भी पानी पीते रहते है।

3. रोग होने पर वे काम भी बंद कर देते हैं, आराम से लेटे रहते हैं या खड़े रहते हैं।

4. शुद्ध वायु में, खुले में रहते हैं।

तो यदि जुकाम होने पर आप भोजन बंद कर दें, पानी पीते रहें, आराम करें और शुद्ध वायु में रहें, तो सर्दी निश्चित रूपसे एक -दो दिन या अधिक से अधिक तीन दिन में चली जायेगी।

पर आज की दौड़-भाग की जिंदगी में काम न करना, भोजन न करना बड़ा कठिन है। 'सर्दी से मुक्ति का कोई सरल इलाज बता दें।'

तो फिर चार दिन तक सुबह-दोपहर-साम केवल फल या तरकारी लें। जैसे सुबह एक पाव के करीब पपीता, नासपाती, दमाटर या गाजर या संतरे, दोपहर और शाम को पाव डेढ़ कोई भी हरी उबली सब्जी, जिसमें मसाले के तैर पर केवल नमक हो, उसका भी जहां तक बना सके, कम प्रयोग करें।

चाहें तो, शाम को सब्जी के बजाय फल लें।

पर यह भी कठिन लगता हो, तो एक सप्ताह तक सुबह फल, दोपहर को चोकर समेत गेंहू के आटे की रोटी तथा हरी सब्जी लें।

''उम्मीद थी आप दमें का इलाज बतायेंगे, पर आप तो सर्दी इलाज के ही विस्तार में जा रहे हैं। खैर, यह तो बतायें कि , सर्दी में जब रोटी ली जा सकती है, तो चावल, दाल, दूध, घी, कुछ उबले अंडे भी क्यों नहीं लिया जा सकते ?''

सर्दी का इलाज समझने पर दमे का इलाज समझने में आपको असानी होगी और जो भोजनक्रम में आपको बता रहा हूँ उसका कारण यह है कि सर्दी, जुकाम, खांसी, दमा कफजन्य रोग हैं। वे शरीर में कफवृद्धि करते है जबकि कफजन्य रोग की चिकित्सा कफ का निवारण होगा। कफ-निवारण खाद्य हैं, सभी हरी तरकारियां, कच्ची खायी जा सकने लायक तरकारियां-जैसे-खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली, पालक, पत्तागोभी, धनिया की पत्ती और केल को छोड़कर सभी फल।

दमें के रोगी के लिए भी उपवास या फलाहार बहुत उपयोगी हैं, पर दमें की चिकित्सा लंबी चलती है। अतः रोगी की शक्ति बनाये रखने के लिए यह आवश्यक हे कि यह कफ निवारक विशिष्ट खाद्य फल, तरकारियों का समुचित उपयोग तो करे ही, थोड़ी रोटी भी लेता रहे कि शक्ति बनी रहे । रोटी कफ- निवारण में विशेष सहायक नहीं होगी पर वह कफ की वृद्धि भी नहीं करेगी और धीरे-धीरे उसके साथ चलने वाला तरकारी और फल अपना काम पूरा कर लेंगे।

दमें के रोगी को नमक का भी व्यवहार नहीं करना चाहिए। नमक जलन पैदा करता है, झिल्लियों में सूजन पैदा करता हे ओर दमें के रोगी को झिल्लियों के सूजन से ही मुकित पाना होता है। उसे भोजन में सुबह ताजे फल, दोपहर को रोटी-सब्जी, साथ में कुछ कच्ची सब्जी और इच्छा हो तो थोड़ा फल भी और शाम को रोटी-सब्जी या केवल फल लेना चाहिए। बात यह है कि सोने से पहले भोजन को पचाने को कठिन काम नहीं करना पड़ता और वह शक्ति जो पचाने में लगती, वह रात भर रोग-निवारण में लगाता है। पेट हल्का

होने के कारण, रात भर श्वास लेने में आसानी होती है ओर शरीर को विश्राम भी पूरा मिलता है।

दमे के रोगी को जल भी यथेष्ट पीना चाहिए। जल भी मूत्र, प्रस्वेद द्वारा कफ का एक घंटा पहले और दो घंटा बाद पानी पीने का अच्छा समय है। यों रखकर, नित्य दिन भर में डेढ़-दो सेर पानी जरूर ही पी लेना चाहिए। जाड़े के दिनों में भी और गरमी में भी दमे के रोगी के लिए गरम पानी पीना अच्छा है। जब भी श्वास लेने में कठिनाई मालूम हो, एक पाव गरम-गरम पीकर उससे राहत पायी जा सकती है। यदि दिनभर गरम पानी न पी सकें, तो सुबह गरम पानी ही चाहिए और रात के लिए गरम पानी थर्मस में पास रखकर सो जाना चाहिए। रात में गरम पानी ही पीना चाहिए। स्वच्छ वायु सबके लिए और दमें के रोगी के लिए तो अति आवश्यक है। दमे का रोगी पूरी सांस नहीं ले पाता और न उनका पूरा फेफड़ा ही काम कर सकता है,अतः कम हवा से पूरा काम चलाने के लिए, उसे बाग-बगीचे, खुली जगह या ऐसी जगह, जहां की वायु पूर्णतया शुद्ध हो , रहना चाहिए। यदि चौबीस घंटे ऐसी जगह में रहने की व्यवस्था न हो सके, तो उसे कम-से कम सुबह-साम घंटे-दो-घंटे शुद्ध वायु में आवश्य रहना चाहिए और सुबह-शाम एक-एक घंटा जरूर ही टहलना चाहिए। आम कारक है कि, ठंडक से दमा बढ़ता है। अतः रोगी ओढ-पोढ घर के बंद कमरे में दुबके रहते है। उन्हें ज्ञात नहीं है कि शुद्ध वायु शरीर में ठंडक नहीं, गरमी पैदा करती है। और टहलते समय तो यों ही शरीर की गरमी बढ़ती है, रक्त-संचालन तीव्र हो जाता है,शरीर के सभी काम तेजी से होने लगते हैं, श्वास-प्रश्वास सरल हो जाता है ओर कफ निकलने लगता है। बहुत-से लोग तो केवल अनुभव के बलपर सुबह-शाम तेजी से टहलकर अपने दमे को वश में रखत हैं। टहते समय गहरी सांस भी लीजिए, अर्थात फेफड़ो में धीरे-धीरे हवा से पूर भरिये और फिर और भी अधिक श्वास फेफड़ो से निकालकर उसका पूरा खाली कर दीजिए। ऐसा दस बार कीजिए। इससे यही लाभ नहीं होगा कि गहरी सांस लेते समय आप शुद्ध वायु का अधिक उपयोग कर सकेंगे और इस प्रकार शरीर में गयी अधिक स्वच्छ वायु शरीर से कफ के निष्कासन में मददगार होगा।

तो अब तक जो कुछ बताया गया है उसके आधार पर दमे के रोगी को सुबह छह बजे उठने पर दैनिक कार्यक्रम इस प्राकर हेागा।

• सुबह उठते ही एक गिलास गरम पानी पीकर शौच जाना और नित्य क्रिया से निवृत्य होकर टहलने निकल जाना।

• साढ़े सात-आठ बजे के करीब फलों का नाश्ता ।

• साढ़े बारह बजे दोपहर को भोजन-रोटी-सब्जी।

• शाम केा साढ़े चार बजे से साढ़े पांच बजे तक एक घंटा टहलना।

• छह बजे संध्या को भोजन, रोटी-सब्जी या फल।

• साढ़े नौ बजे शयन।

यदि इतना ही शुरू किया जा सके तो समझ लीजिए, आपने दमें की जड़ काटनी शुरू कर दी है। पर , आप धूप का चिकित्सा के तौर पर उपयोग कर इस कार्यक्रम केा तीव्रतर बना सकते हैं। सूर्य सभी जीवों को प्राणदाता है। रोग से मुक्ति पाना शरीर को अधिक बलवान बनाना है। अतः सूर्य-किरणों का उपयोग कीजिये। नित्य सुबह टहलकर आकर नंगे बदन दस-पंद्रह मिनट धूप में रहिए और उसके तुरंत बाद ठंडे जल

से स्नान कीजिए। स्नान के लिए कुंए या हैंडपंप का जल लीजिए। यदि वह न मिले तेा ठंडे जल में थोड़ा सा गरम पानी मिलाकर उसे कुएं के जल जैसा गरमम बना लीजिए। स्नान करते समय तौलिया पानी में भिगो-भिगोकर श्रीर को पांच मिनट तक रगड़िये और फिर स्नान समाप्त कर शरीर को पोंछ लेने के बाद भी सूखे तौलिये से शरीर को पांच मिनट तक रगड़िये। और यदि अपने में कम शक्ति हो तो दूसरे से रगड़वाइये।

जल के प्रयोगों में कूने का बताया कटि-स्नान बहुत ही उपयोगी है। हो सके तो यह स्नान सुबह-शाम टहलने जाने के पूर्व लेना चाहिए। कमजोर रोगियों के लिए यह 3-4 मिनट लेना काफी होगा। अधिक सशक्त रोगी इसे दस मिनट तक ले सकते हैं। यह स्नान पाचन को सुधारता और मल-निष्कासन प्रणाली को बलवान बनाता है।

छाती की गीली पट्टी रक्त-संचालन में वृद्धि करती है तथा फेफड़ों और हृदय को बलवान बनाती है। सुविधा तेा यह भी नित्य दिन में तीन बजे के करीब पौन घंटे के लिए ली जा सकती है।

बस इतनी ही है दमे की चिकित्सा और यह बहुत सरल भी है। पर दमें की चिकतत्सा के दौरान कई कठिनाईयां भी आ जाती हैं। कुछ दिन चिकित्सा करने पर दमा उभर आता है। यह कोई अशुभ लक्षण नहीं है। यह शरीर को अपने रोगमुक्त करने के लिए प्राकृतिक रूपसे दी गयी मदद का परिणाम है। वही अपने को शीघ्रता से रोगमुक्त करना चाहता है इस समय उसकी वही चिकित्सा होगी, जो ऊपर सर्दी की बतायी गयी है। अर्थात, उपवास करना, पानी पीते रहना और आराम करना । इस विधि से दमे कादौरा शीघ्रता से जायेगा। उपवास के समय और जब भी पेट साफ न हो, सुबह सेर-सवा सेर गुनगुने पानी का एनिमा लेकर पेट भी साफ करते रहना चाहिए। उपवास के बाद दो-तीन दिन फलाहार करके, फिर दैनिक भोजन पर आना चाहिए। दौरे के समय पंद्रह-बीस मिनट के लिए पैरों का गरम नहान लेना बड़ा उपयोगी हैं यों इसे रात को सोने जाने के पहले नित्य और कष्ट बढ़ने पर कभी भी लिया जा सकता है।

- आरोग्य मन्दिर, गोरखपुर

सामयिक नेहा के अनवरत 21 वर्ष के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

डा0 आर0के0 पाण्डेय

शिशु रोग विशेषज्ञ

सरस्वती क्लीनिक, अलहदादपुर, गोरखपुर

सामयिक नेहा के अनवरत 21 वर्षों के सफलतापूर्वक प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएं

डा. हर्षवर्द्धन राय

एम0एस0 (सर्जरी) (गोल्ड मेडलिस्ट), लैप्रेस्कोपिक सर्जन

गंध संवाद का विलक्षण संसार

– डा० श्री गोपाल काबरा
एल०एल०बी०, एम०एस०सी० (मेडिकल), एम०एस० (एनाटोमी), एम०एस० (सर्जरी)

कोई जीव या प्राणी अपने से बाहरी जगत से संपर्क और संवाद किये बिना जीवित नहीं रह सकता। प्रकृति से संपर्क-संवाद अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए, और प्रजाति से संवाद जीव की प्रजाति को शाश्वत बनाये रखने के लिए। जीव के विकास क्रम में संवेदक कोशिकाऐं संग्रहित हो कर ज्ञानेन्द्रियों का निर्माण करती हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियां पांच संवेदनाएँ - स्पर्श, गंध, स्वाद, श्रवण और दृष्टि। संपर्क का माध्यम भौतिक यथा ध्वनि, प्रकाश व स्पर्श, और रासायनिक यथा हवा में घुलनशील वोलेटाइल ऑर्गनिक रसायन और तरल में धुलनशील रसायन। संवेदना का बोध और प्रतिक्रिया ही संवाद है। अमूमन इसे चेतना के स्तर पर ही जाना जाता है। अवचेतन में संवाद आज शोध का विषय है, उन्नत तकनीक से इसे जाना, परखा और उजागर किया जा रहा है। अवचेतन संपर्क व संवाद से सामाजिक प्रतिक्रिया शोध का विषय है।

एक नर कीट जो इतनी दूर है कि न तो वह उस मादा कीट को देख सकता है न उसकी आवाज सुन सकता है उसे

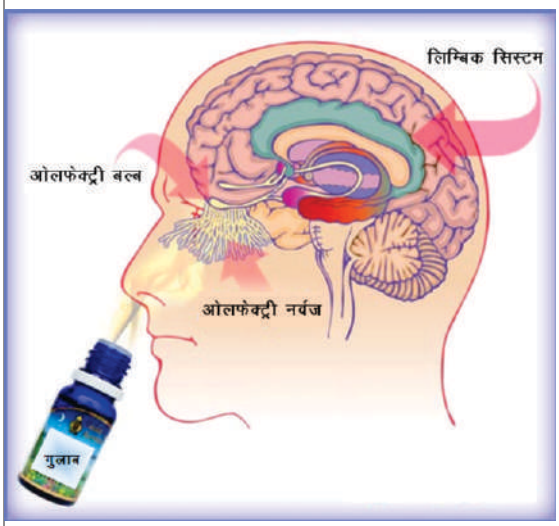

कैसे भान होता है कि उसकी ही प्रजाति की एक मादा कीट यौन प्रवृत है और वह उसकी और बढा चला आता है? मादा कीट कैसे यह संपर्क साधती है? कैसे होता है यह यौन संपर्क और संवाद?

फेरोमोन :- शरीर के बाहर स्रवित हार्मोन जो उस प्राणी की प्रजाति के अन्य प्राणियों में प्रतिक्रिया स्वरूप एक विशिष्ट प्रकार का सामाजिक आचरण और व्यवहार करने को प्रेरित करते हैं, फेरोमोन कहलाते हैं। ये रासायन अणु होते हैं जो स्रवित होकर गंध के द्वारा उस प्रजाति विशेष के प्राणियों को उद्वेलित करते हैं। ये सूचक हार्मोन होते हैं जो अपनी प्रजाति के प्राणियों को विशिष्ट सूचना देते हैं और सूचना अनुरूप व्यवहार करने को उद्वेलित और मजबूर करते हैं। पहली बार इसे रेशम कीट में पहचाना गया था। नर रेशम कीट कैसे मादा कीट से समागम करने को उड़ता हुआ उसकी ओर चला आता है, यह वैज्ञानिकों के कोतुहल, जिज्ञासा और शोध का विषय था। कैसे मीलों दूर बैठे नर कीट को मादा कीट की विद्यमान दिशा का भान हो जाता है? भान ही नहीं वह कैसे जान लेता है कि यह एक मादा कीट का प्रेम प्रस्ताव है, प्रणय निवेदन है? प्रयोगों से यह साफ था कि यह देख या सुन कर नहीं होता अपितु यह तो गंध के माध्यम से ही हो सकता है। गंध का मतलब था कि मादा कीट ऐसा कोई रसायान हवा में छोड़ती है जिसे सूंघ कर नर कीट उस ओर आकर्षित होता है। रसायन की गंध का अनुसरण कर नर मादा तक पहुँचता है। सूक्ष्म कीट द्वारा स्रावित ऐसा केमिकल भी अति सूक्ष्म मात्रा में ही हो सकता था। सूक्ष्म किन्तु इतना शक्तिशाली कि इसके अणु उड़ कर मीलों दूर पहुँच जायें। विशिष्ट इतना कि हवा में घुले अन्य लाखों अणुओं में से भी अलग पहचाना जा सके। विलक्षण इतना कि इसे प्रेम पाती की तरह बाँचा जा सके। 50000 मादा सिल्क वॉर्म की ग्रंथियों से पहचान लायक मात्रा में इसे इकट्ठा किया जा सका। जर्मन वैज्ञानिक एडोल्फ ब्यूटेनेन्ड्ट को बीस साल लगे इसे पृथक और परिष्कृत कर पहचानने

में। इसे कीट के नाम के अनुरूप बोम्बीकोल नाम से चिन्हित किया गया। इसे शीघ्र ही सिन्थेसाइज भी किया गया। शुद्ध बोम्बाकोल की एक बूँद के हजारेवें भाग को कहीं भी छोड दें तो प्रेमासक्त नर रेशम कीट वहां चले आयेंगे।

एक कीट या प्राणी द्वारा स्रावित या विसर्जित केमिकल फेरोमोन उसी प्रजाति के दूसरे सदस्य के पास गंध के रूप में पहुँचता है। नाक में स्थित वोमरोनेजल नामक ज्ञानेन्द्री इन संवेगों को ग्रहण कर संवेदना को मस्तिष्क के ओलफेक्ट्री लोब में भेजता है। गंध संवेदना में निहित सूचना का यहां विस्तृत विश्लेषण लिम्बिक लोब में होता है। निष्कर्ष अनुरूप प्रतिक्रिया में हॉर्मोन और साइटोकाइन द्वारा शरीर की आंतरिक फिजियोलाजी और प्राणी का आचरण प्रभावित होता है। अवचेतन संवाद से उद्वेलित सामाजिक आचरण। संवाहक होते हैं फेरोमोन।

जैविक संसार में विभिन्न फेरोमोन अपनी प्रजाति के अन्य जीवों में एक निश्चित आचरण आहूत करने को स्रावित किए जाते हैं। अलग अलग संवाद के लिए विशिष्ट फेरोमोन संवाद वाहक फेरोमोन। यथा-

Alarm अलार्म, डर, खोफ, भयोत्पादक, आपद संकेतक, खतरे का संकेतक।

To follow a food trail भोजन स्रोत पथ प्रदर्शक, मार्गदर्शक, पथ अनुकरण।

Sexual arousal यौन प्रेरक, यौन उत्तेजक।

To tell other female insects to lay their eggs elsewhere. प्रजाति की अन्य मादाओं को संकेत कि वे अपने अंडे यहां न दे।

To respect a territory क्षेत्राधिकार सूचक।

To bond (mother-baby) लगाव प्रेरक मां-बच्चे में मां के स्तन पर स्थित ग्रंथियों स्रावित यह अबोध शिशु को अपनी मां को पहिचान स्तनपान के लिए आकर्षित करता है। वात्सल्य प्रेरक यह फेरोमोन मां बच्चे में अपनत्व और अगाढ लगाव का वाहक होता है।

एग्रागेशन फेरोमोन :- ऐसा फेरोमोन जो कीट द्वारा अपनी प्रजाति के नर अथवा मादा कीटों को स्थान विशेष पर एकत्रित करने को छोड़ा जाता है। फेरोमोन स्रावित करने के पीछे उद्देश्य होता है साथी चयन में अधिक स्वतंत्रता और विविधता। यह चयन के लिए सामूहिक विवाह आयोजन जैसा होता है या स्वयंवर जैसा। कई कीट इस फेरोमोन का प्रयोग अपने दुश्मन से लड़ने के लिए अपने साथियों का अवाहन करने को करते हैं। इसे एग्रागेशन फेरोमोन यानी एकत्रिकरण फेरोमोन कहते है।

अलार्मा फेरोमान या चेताने वाल फरोमोनः चींटी, मधुमख्खी और दीमक जैसे समूह में रहने वाले कीटों में अगर किसी एक पर दुश्मन आक्रमण करता है तो वह कीट एक अलार्म फेरोमेन स्रावित करता है जिससे सारे साथी कीट सामूहिक रूप से दुश्मन पर टूट पड़ते हैं।

एपिडेइक्टिक फेरोमोन या वर्जना फेरोमोन :- यह एक ऐसा फेरोमान होता है जिसे मादा कीट जिस फल में अपने अंडे देती है वहां छोड़ती है। अन्य मादाओं को इस फेरोमोन से सूचित किया जाता है कि वे अपने अंडे इस फल में नहीं अपितु अन्यत्र दें। इसे एपिडेइक्टिक या वर्जना फेरोमोन कहते हैं - सूचना पट्ट 'यहां मेरे अंडे हैं!

रिलिजर या सम्मोहक फेरोमोन :- यौनेच्छुक मादा कीट द्वारा स्रावित यह एक तीव्र गति वाला शक्तिशाली फेरोमोन होता है जो मीलों दूर स्थित नर कीट को

कीट-पतंग और जानवर जो फेरोमोन (गंध रसायन) काम में लेते है, जिनमें विभिन्न फेरोमोन चिन्हित है

आकर्षित-सम्मोहित करता है। 'प्रणय निवेदन! प्रेम पाती।'

Primer प्राइमर या प्रेरक फेरोमोन प्राणी की होर्मोन ग्रंथियों को उद्वेलित कर अंतःस्रावी हार्मोनों के माध्यम से उसकी शारीरिक क्रियाओं और आचरण को प्रभावित करते हैं।

Territorial टेरीटोरियल अधिकार क्षेत्र फेरोमोन। आपने कुत्ते को टांग उठा कर पेशाब करते देखा होगा। कुत्ते बिल्ली के पेशाब में यह फेरोमोन होता है। अपने क्षेत्र में पेशाब कर वे इसे अपना अधिकार क्षेत्र घोषित करते हैं। क्षेत्र का अतिक्रमण होने पर आपने आदमियों को भी कुत्ते बिल्ली की तरह लड़ते देखा होगा।

Trail ट्रेल या पथप्रदर्शक फेरोमोन। चीनी के दाने फर्श पर गिरे और बिल से निकल कर शीघ्र ही चींटी वहां पहुंच गई। बिल में बैठी चींटी को चीनी की सूचना कैसे मिली? चीनी की गंध से जो एक चींटी पहचान सकती है, अपनी खाद्य पदार्थों की गंध। चींटी बिल में से तो आ गई लेकिन वापस कैसे बिल तक पहुंचेगी? चींटीं जिस रास्ते चलती है उस रास्ते पर सूचनां फेरोमोन छोड़ती जाती है। उसी का अनुसरण कर वह अपने बिल में लौटती है। लौट कर अन्य फेरोमोन के माध्यम से खाद्य उपलब्धि की सूचना साथियों को देती है। जाते और आते रास्ते में छोड़े गये फेरोमोन के सहारे अन्य चींटियाँ उसका अनुसरण कर चल पड़ती हैं। जब तक खाने का स्रोत रहता है, यह पथ प्रदर्शक फेरोमोन बारम्बार छोड़ा जाता है। अल्प समय में उड़ जाने के कारण यह आवश्यक है।

Queen Pheromone महारानी फेरोमोन। महारानी मधुमक्खी एक फेरोमान स्रवित करती है जिसके वशीभूत सभी सेवक मधुमक्खियां केवल उसी महारानी की सेवारत रहती हैं, दूसरी किसी माहरानी के लिए घर नहीं बनाती। सेवक मधुमक्खियों की ओवरी (अंडकोष) विकसित नहीं होती और वे बच्चे पैदा नहीं कर सकतीं। प्रजनन कर प्रजाति बढ़ाने का जिम्मा महारानी का तथा प्रजाति के पालन पोषण रक्षा का या राज करने का जिम्मा तथा कथित सेवक मधुमख्खियों का।

पेस्ट कंट्रोल :- कीट कंट्रोल फेरोमोन। खेतों में ऐसे पिंजरे लगाये जाते हैं जिनमे कीट आयें तो फंस कर मर जाएँ। उसमें हानिकारक कीट को आकर्षित करने वाला फेरोमोन छोड़ा जाता है। सारे कीट फसल पर न जाकर पिंजरे में आकर मर जाते हैं। 1979 से ये उपलब्ध हैं। अधिकतर ये मादा कीट द्वारा स्रावित शक्तिशाली यौन आकर्षक फेरोमोन या उसके समकक्ष केमिकल्स काम में

- शेष पृष्ठ 49 पर....

जानवरों में फेरोमोन

मादा हिरण

नर हिरण

नव अन्वेषण वीथिका

गर्भावस्था में फॉलिक एसिड के अत्यधिक सेवन से बच्चों में बढ़ता है एलर्जी का खतरा

गर्भावस्था के बाद के चरणों में फॉलिक एसिड के सेवन से इंट्रूंयूटेरिन ग्रोथ ारेस्ट्रिक्शन (आर्टश्युजीआर) से प्रभावित बच्चों में एलर्जी के खतरे बढ़ सकते हैं। एक नए अध्ययन में इन खतरों के प्रति आगाह किया गया है। फॉलिक एसिड विटामिन बी का एक प्रकार है जो विकसित हो रहे भ्रूण के तंत्रिका ट्यूब में होने वाले दोषों को रोकता है।

तंत्रिका ट्यूब गर्भावस्था के पहले महीने में विकसित हो जाता है। यही कारण है कि चिकित्सकीय पेशेवर आम तौर पर महिलाओं को गर्भावस्था की पहली तिमाही में फॉलिक एसिड पूरक औषधि के तौर पर लेने की सलाह देते हैं। हालांकि गर्भावस्था के बाद के चरणों में इसके नियमित सेवन की जरूरत नहीं रह जाती। ऑस्ट्रलिया की यूनिवर्सिटी ऑफ एडिलेड के अनुसंधनकर्ताओं ने भेड़ के तीन वर्गो से पैदा होने वाले मेमनों पर अध्ययन किया।

इनमें सामान्य से छोटे प्लेसेंटा वाली मांओ, छोटे प्लेसेंटा वाली मांओ जिन्हें फोलिक एसिड का ज्यादा डोज गर्भावस्था के आखिरी महीने तक दिया गया है। तीसरा समूह को दिया गया। जिनका आहार और प्लेसेंटा दोनों सामान्य था। अनुसंधानकर्ताओं ने पाया कि ज्यादा डोज लेने वाली भेडों के बच्चों में एलर्जी का खतरा बढ़ जा है। यह अध्ययन अमेरिकन जर्नल ऑफ फिजियोलॉजी में प्रकाशित हुआ है।

सोने से पहले फोन का उपयोग बढ़ा सकता है बच्चों का वजन

बच्चों के लिए सोने से पहले स्मार्ट फोन का उपयोग करना उनकी सेहत के लिए नुकसान दायक साबित हो

सकता है। यह बात एक नए अध्ययन के सामने आयी है।

अमरिका के पेन स्टेट कॉलेज ऑफ मेडिसिन के शोधकर्ता केरामन फुलेर ने बताया कि बिस्तर में जाने से पहले ट्रेक्नालॉजी के उपयोग का संबन्ध कम नीद आने और उच्च बॉडी माप इन्डेक्स से है हमने इसका जुड़ाव सुबह ज्यादा थकान महसूस करने से भी पाया है। शोधकर्ताओं ने यह निष्कर्ष बच्चो के माता पिता से उनके टेक्नालॉजी के उपयोग और उनकी सोने के आदत के बारे में एकत्र की गई जानकारी के विशलेषण के आधार पर निकाला है। बिस्तर पर जाने से पहले टी.वी. या बिडियो गेम खेलने वाले बच्चे औसतन 30 मिनट कम सोते हैं जब की स्मार्ट फोन या कम्पयूटर का इस्तेमाल करने वाले बच्चे औसतन 1 घंटे कम सो पाते हैं।

हृदय संबंधी बीमारियों से जुड़े 36 जीन का पता चला

वैज्ञानिकों ने हृदय संबंधी बीमारियों से जुड़े ३६ नए जीन का पता लगाया है। इससे अलग-अलग बीमारियों के इलाज के लिए अलग दवाएं बनाई जा सकेंगी। नए जीन में एक ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर जीन भी है जो अन्य जीन के

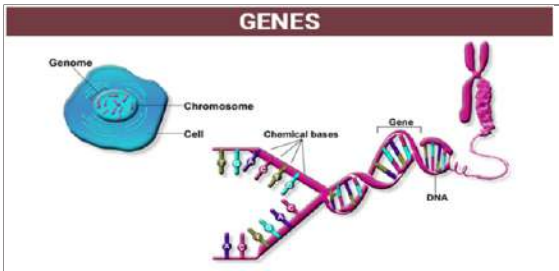

एक्सप्रेशन को नियंत्रित करता है। इस जीन के कारण कार्डियक हाइपरट्रॉफी जैसी बीमारी भी होती है। इस रोग में हृदय की मांसपेशिया असामान्य तरीके से बढ़ने लगती है। अब तक इन जीन का पता लगाने के लिए स्वस्थ और बीमार व्यक्ति के हृदय का अध्ययन किया जाता था। अमेरिका की नार्थ इस्टर्न यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने इस बार समान आनुवांशिक गुणों वाले चूहों के जोड़े बनाकर उनका अध्ययन किया। इन जोड़ों में से एक को हार्ट फेल कराने वाली दवा दी गई। फिर दोनों चूहों में उत्पन्न जीन एक्सप्रेशन का अध्ययन किया गया। वैज्ञानिकों का कहना है कि इस शोध के बाद सामान्य ब्लड टेस्ट से ही पता चल जाएगा कि मरीज को कौन सी दवा दी जानी चाहिए। इससे मरीज का सही समय पर उचित इलाज हो सकेगा।

स्लीप स्पिंडल्स से होती है स्मरण शक्ति मजबूत

कई बार हम तुरंत पढ़ी हुई चीजें भूल जाते हैं। मस्तिष्क में होने वाले स्लीप स्पिंडल्स इन जानकारियों को लंबे समय तक याद रखने में हमारी मदद करते हैं। सोने के दौरान आधे से दो सेकेण्ड तक मस्तिष्क में कंपन होता है। इलेक्ट्रॉनसेफलोग्राम पर इस कंपन को देखा और मापा जा सकता है। यूनिवर्सिटी ऑफ बर्मिघम के शोधकर्ताओं के अनुसार स्पिंडल्स के समय हमारी स्मरण शक्ति का एक हिस्सा अधिक सक्रिय हो जाता है। मस्तिष्क को बिना कोई हानि पहुँचाए इलेक्ट्रोड की सहायता से इनकी संख्या बढ़ाई जा सकती है। वैज्ञानिकों का कहना है हमारी स्मरण शक्ति स्पिंडल्स की संख्या पर निर्भर करती है। शोध के लिए प्रतिभागियों के मस्तिष्क में हो रहे कंपन का ईईजी की सहायता से अध्ययन किया गया था। इस शोध की मदद से अब वैज्ञानिक यह पता लगा सकेंगे कि इस प्रक्रिया में हुई किस गड़बड़ी के कारण कुछ लोग याद करने में असमर्थ हैं।

नई तकनीक से अपेंडिक्स की जांच

एक भारतवंशी समेत वैज्ञानिकों के दल ने बच्चों में अपेडिक्स की जांच के लिए एक नई तकनीक विकसित की है। इससे इस समस्या के बढ़ते खतरे की पहचान और उसके अनुसार इलाज करने में मदद मिल सकती है।

अमेरिकी शोधकर्ताओं ने नई जांच पीडीऐट्रिक अपेंडिसाइटिस रिक्स कैकुलेटर (पीएआरसी) विकसित की है। इसकी मदद से बच्चों में अपेडिक्स के खतरे की गणना की जा सकती है। प्रमुख शोधकर्ता अनुपम खबरबंदा ने कहा, 'यह विधि रोगियों और हेल्थ केयर सिस्टम के लिए लाभकारी साबित होगी। इससे गैरजरूरी चिकित्सा जांच और खर्च में कमी आएगी। हम इस बात को लेकर उत्साहित है कि बच्चों और किशोरों में पेट दर्द को लेकर मानक के अनुरूप एक नया तरीका विकसित करने में सफल हुए। अपेंडिसाइटिस में आमतौर पर पेट दर्द होता है और इसकी पहचान के लिए सीटी स्कैन की जाती है। यह जांच न सिर्फ महंगी बल्कि रोगियों में रेडिएशन का खतरा भी रहता है।

मोटापे से पीड़ित महिलाओं में हार्ट अटैक का ज्यादा खतरा

मोटापे से पीड़ितों में हृदय संबंधी समस्याओं का भी खतरा रहता है। एक नए अध्ययन का दावा है कि मोटापे और हार्ट अटैक के बीच गहरा संबंध होता है। जिन महिलाओं की कमर ज्यादा मोटी होती है उनमें दिल का दौरा पड़ने का खतरा ज्यादा हो सकता है।

ब्रिटिश शोधकर्ताओं के अनुसार, नए अध्ययन से जाहिर होता है कि खासतौर पर महिलाओं में हार्ट अटैक के बढ़ते खतरे में कमर के आकार की अहम भूमिका हो सकती है। यह निष्कर्ष इंग्लैण्ड, स्कॉटलैंड और वेल्स के 4.79 लाख वयस्कों पर किए गए अध्ययन के आधार पर निकाला गया है। ज्यादा वजन वाले इन प्रतिभागियों की औसत उम्र 56 साल थी लेकिन इनमें से कोई भी पहले से हृदय रोग से पीड़ित नहीं था।

पुस्तक समीक्षा

– प्रो० श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
राजनीति विज्ञान विभाग
दी.द.उ.गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर

डॉ० वेदप्रकाश पाण्डेय द्वारा संपादित पुस्तक 'शहरनामा गोरखपुर' वस्तुतः गोरखपुर विषयक इनसाइक्लोपीडिया है। इसमें गोरखपुर का सांगोपांग विवेचन है और प्रस्तुतीकरण है यहाँ के विशद, समृद्ध और प्रेरक अतीत का तथा विविधताओं से परिपूर्ण वर्तमान का। यह कृति हमारे परिचयन से हमें परिचित कराती है तथा मूलतः अवचेतन से चेतना लोक की पाया पर ले जाती है। यह पुस्तक महानगरीय जनपद से सबंधित अवस्थिति एवं इतिहास, पहचान साहित्य, कला-संस्कृति, पत्रकारिता, विज्ञान, चिकित्सा, उद्योग, क्रीड़ा-कौशल, समुदाय, विधि-व्यवसाय एवं अन्य उपयोगी संदर्भों का रूपायन है। यह गोरखपुर की विकास पाया का वृहद आख्यात है। इसीलिए तो गोरखपुर के संदर्भ में क्या है जो इसमें नहीं है। 'इतिहास कैसे जीवन्त होता है और वर्तमान कैसे मुखरित' यह इस पुस्तक को पढ़कर समझा जा सकता है।

इस पुस्तक में निरूपित सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, राजनीतिक, व्यावसायिक धार्मिक एवं आध्यात्मिक गतिविधियों का आदि से लेकर अद्यतन विवरण स्वाभाविक रूप से यहाँ परिवेश से अवगत करा देता है। यह पुरातन और अधुनातन का मिलन बिन्दु है और इसे अभिव्यक्ति दे पाना संपादक की अनूठी विशेषता है। इस पुस्तक में समाज, संस्कृति, शिक्षा, चिकित्सा और अर्थव्यवस्था की सभी मूलभूत संरचनाओं को करीने से पिरोया गया है।

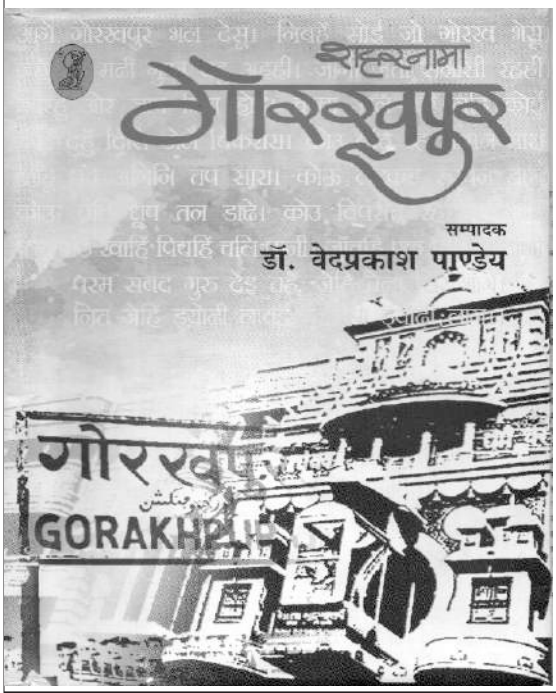

गोरखपुर से संबधित सभी प्रकार की जानकारियों और सर्जनात्मक प्रवृत्तियों की यह पुस्तक सुव्यवस्थित और सुगठित प्रस्तुति है तथा स्वयं में पूर्णता लिए हुए एक अतिशय प्रशंसनीय कृति है। इसमें अंकित प्रत्येक लेख उपादेय है, ध्यानाकर्षक है, ज्ञानवर्द्धक है। पुस्तक की पूर्णता में विविध विधाओं में दक्ष महानुभावों का सार्थक सहयोग प्रापत कर लेने का दुष्कर कार्य भी डॉ० पाण्डेय जी ने प्रांजल, सधी हुई, सुदृढ़ एवं सुंदर है तथा विषय वस्तु की प्रस्तुति सरल किन्तु प्रभावशाली है।

इस पुस्तक के माध्यम से डॉ० वेद प्रकाश पाण्डेय ने निश्चय ही ज्ञान के क्षेत्र को समृद्ध किया है। पुस्तक के अंत में तीन महत्वपूर्ण परिशिष्ट सम्मिलित किये गये हैं तथा लेखक परिचय के साथ इसे पूर्णता प्रदान की गई है। साहित्यिक कलेवर में तर्क संगत एवं प्रामाणिक जानकारी को बोधगम्य बना देना सहज नहीं होता किन्तु पाण्डेय जी अपनी विशिष्ट संपादन शैली से इस उद्देश्य में पूर्णतः सफल रहे हैं। पठनीयता की दृष्टि से यह विलक्षण कृति है। एक बार इस पुस्तक को हाथ में लीजिए तो पूरा पढ़े बिना मन को संतुष्टि नहीं मिलती। यह पुस्तक गोरखपुर के निवासियों, विद्यार्थियों, शिक्षकों समाजसेवियों राजनीतिज्ञों, यहाँ के आगन्तुकों, प्रशासकों, नीति निर्धारकों, शोधार्थियों प्रतियोगियों तथा सुधी व्यक्तियों के लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी तथा देश के प्रत्येक जनपद नगर और महानगर के लिए इस प्रकार के प्रयास हेतु अनुकरणीय सिद्ध होगी।

अब मरने का भी अधिकार होगा

- अमित कुमार
कार्यकारी सम्पादक

सुप्रीम कोर्ट आफ इण्डिया ने 9 मार्च 2018 को एक प्रगतिशील और ऐतिहासिक फैसला दिया है। जिसके अनुसार असाध्य रोग से ग्रस्त व्यक्ति को इच्छा मृत्यु का कानूनी अधिकार प्राप्त हो गया। यह निर्णय कई मामलों में ऐतिहासिक और प्रगतिशील है। जिससे यह स्थापित कर दिया कि सम्मान के साथ जीने के अधिकार के साथ ही गरिमापूर्ण मृत्यु का अधिकार भी मानवीय अधिकार है।

सुप्रीम कोर्ट के पाँच जजो की संविधान पीठ ने फैसले में पैसिव यूथेनेसिया को कानून सम्मत बताया है। उसने कहा है कि कोई व्यक्ति 'लिविंग बिल' तैयार करके यह मांग कर सकता है कि अगर भविष्य में वह स्वास्थ्य से जुड़ी लाइलाज या मरणासन्न स्थिति में चला जाए जिसमें तमाम आधुनिक इलाजों के बावजूद उबरना मुश्किल हो, तो उसके जीवन रक्षण प्रणाली को हटा दिया जाय। सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला कॉमन कॉज संस्था की एक याचिका पर आया है। 11 मई 2005 को उच्चतम न्यायालय ने गैर सरकारी संगठन कॉमन कॉज की इच्छा मृत्यु सम्बन्धी याचिका को मंजूर किया था, जिसमें उसने लिविंग बिल को मान्यता दिए जाने को लेकर दिशानिर्देश जारी करने की मांग की थी। इस मांग के साथ उसने दलील दी थी कि जब कोई एक्सपर्ट लाइलाज मरीज के बारे में यह राय दे दे कि मरीज की हालत उस स्तर पर पहुँच गई हैं जहाँ से उसमें सुधार संभव नहीं है तो उसे जीवन रक्षक प्रणाली के इस्तेमाल से इन्कार का अधिकार दिया जाना चाहिए।

यहाँ यह तथ्य जानना उचित है कि इच्छा मृत्यु भी दो तरह की है- मृत्युवरण (यूथनेशिया) और दया मृत्यु (मसी किलिंग)। अदालत का निर्णय सभी स्थितियों में लागू नहीं होगा। एक बात और स्पष्ट जानना आवश्यक है कि मृत्युवरण और दया मृत्यु की तरह सक्रिय इच्छा मृत्यु और निक्रिय इच्छा मृत्यु में भी अन्तर है अदालत ने निष्क्रिय इच्छा मृत्यु की ही अनुमति दी है। अदालत द्वारा दिये गये

लिविंग बिल के प्रावधानों में कोई भी व्यक्ति मजिस्ट्रेट के सामने लिखित वसीयत करता है। या यदि वह ऐसा करने में सक्षम नहीं है तो असाध्य रोग की दशा में उसके निकट संबंधी या मित्र लिखित अवेदन कर सकते हैं। इसकी जाँच अदालत द्वारा नियुक्त चिकित्सक दल करेगा और उसके सुझाव एवं संस्तुति पर आगे की

कार्रवाही की जायेगी। यहाँ यह समझना भी आवश्यक है कि इस फैसले के अन्तर्गत मरीज खुद अपनी मृत्यु को नहीं चुनता है। बल्कि उसकी जीवन रक्षक प्रणाली को हटा दिया जाता है, जिससे कि मरीज केवल कहने मात्र के लिए जीवित रहकर जो कष्ट झेल रहा है, उसकी स्वाभाविक मृत्यु हो सके।

लड़ाई के पड़ाव

♦ 1994 में पी० रथिनम बनाम केन्द्र सरकार मामले में सुप्रीम कोर्ट के डबल बेंच ने आई०पी०सी० की धारा 309 जो कि आत्महत्या का प्रयास है को गैर संवैधानिक करार दिया था।

♦ 1996 में ज्ञान कौर के मामले में सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने 1994 के एक फैसले को पलट दिया और कहा कि जीवन के अधिकार में मरने का अधिकार शामिल नहीं है। संविधान पीठ ने सेक्शन 309 की वैद्यता को बरकार रखा।

♦ 27 अप्रैल 2005 को इण्डियन सोसाइटी ऑफ क्रिटिकल केयर मेडिसिन द्वारा इंड ऑफ लाइफ विषय पर दिल्ली में एक सेमिनार हुआ। इसमें तात्कालीन कानून मंत्री ने इस बात को लेकर अपनी सहमति जताई कि ऐसे मरीज जिनके पुनः लौटने की संभावना नहीं है, उसका जीवन रक्षक प्रणाली को हटाये जाने को लेकर फ्रेम वर्क की जरूरत है।

♦ 28 अप्रैल 2006 को ऐक्टिव यूथेनेसिया को लेकर विधि आयोग ने एक कानूनी मसौदा पेश किया। इसमें कहा गया कि ऐसे कोई भी याचिका हाईकोर्ट में डाली जानी चाहिए जो विशेषज्ञों की राय के बाद इस पर निर्णय लें।

वे चर्चित मामले जो लड़ाई को धार दिये

असाध्य रोग से पीड़ित ऐसे मरीज जिनके ठीक होने की कोई संभावना नहीं थी और इसकी पुष्टि चिकित्सकों ने भी की थी, ऐसे मरीज या उनके परिजनों ने महामहिम राष्ट्रपति महोदय, उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में अपने जीवन को समाप्त करने की अनुमति के लिए हजारों याचिकायें दी थी। इनमें से कुछ ऐसे मामले जो राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में रहे।

♦ अरूणा शानबाग जो कि मुम्बई के एक अस्पताल में नर्स थीं उनके साथ अस्पताल के एक कर्मचारी ने बलात्कार का प्रयास किया और प्रतिरोध में उनको गम्भीर चोट आयी जिससे वो कोमा में चली गई। अस्पताल में उनका इलाज

उनके साथी कर्मचारियों ने बड़े मनोयोग से किया परन्तु वे वर्षों तक कोमा से लौट नहीं पाई और अस्पताल में एक जिन्दा लाश की तरह पड़ी रहीं। 2009 में सुप्रीम कोर्ट में एक साथी महिला ने अरूणा शानबाग के जीवन को समाप्त करने की अनुमति के लिए एक याचिका दायर की। अदालत ने उनकी याचिका खारिज कर दी। 18 मई 2015 को 42 साल कोमा में रहने के बाद अरूणा शानबाग की मृत्यु हुई।

♦ 2004 में हैदराबाद के शतरंज खिलाड़ी वेंकटेस ने अपनी माँ के माध्यम से आंध्र प्रदेश हाईकोर्ट में एक याचिका दायर की कि उन्हें अपनी इच्छा से मरने की

अनुमति प्रदान की जाय ताकि उनके शरीर के उपयोगी अंगों को जरूरतमन्द मरीजों को देकर उनका जीवन बचाया जा सके। कोर्ट ने उनकी याचिका को खारीज कर दिया। वेंकटेस मसकूलर डायस्ट्रोफी नामक लाइलाज बीमारी से ग्रस्त थे। इस बीमारी ने मांसपेशियों का क्षरण होने लगता है और दुखद यह है कि अभी भी इसका कोई इलाज नहीं।

♦ स्पेन निवासी रेमोन सैनपेड्रो को गर्दन के नीचे से पूरे शरीर में लकवा मार दिया था। वे वर्षों इसी अवस्था

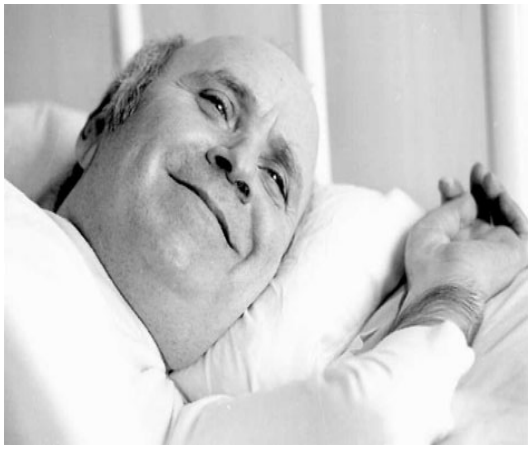

में रहे और उनके ठीक होने की कोई संभावना नहीं थी। उनके बारे में लाश से जुड़ा सिर जैसी बात कही जाने लगी। किसी मदद से आत्महत्या के लिए उन्होंने 29 साल तक लड़ाई लड़ी और वे मुकदमा हार गये। 1998 में रेमोन सैनपेड्रो ने खुद को जहर देने के लिए कई लोगों को इकट्ठा कर लिया जिससे किसी एक पर कोई आरोप ना लग सके।

कुछ और तथ्य

♦ हेपोक्रेटिक शपथ जिसे प्रत्येक चिकित्सक अपने पढ़ाई के दौरान लेता है, में यह बात भी आती है कि "अगर कोई मरीज कहे, तो भी मैं किसी को जान लेने

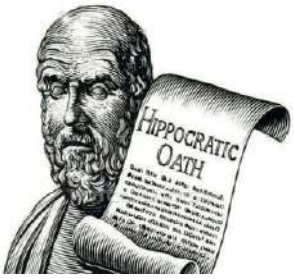

वाली दवा नहीं दूँगा और ना ही किसी को ऐसा करने की सलाह दूँगा।

♦ दया मृत्यु के मामले में हिटलर भी पीछे नहीं था। 1939 में हिटलर ने बीमारों और दिव्यांगों की दया मृत्यु का आदेश दिया। इस आदेश में नवजात शामिल किये

गये, परन्तु बाद में सभी उम्र के दिव्यांग इसमें शामिल कर लिये गये।

♦ स्टीफन हॉकिंग का नाम शायद ही कोई ऐसा पढ़ा लिखा व्याक्ति होगा जो नहीं जानता होगा। 8 जनवरी

1942 में जन्में स्टीफन 21 वर्ष की उम्र में एमायोट्रॉफिक लैटरल स्कलेरॉसिस नामक रोग से पीड़ित हो गये। यह एक तरह की न्यूरोलॉजिकल बीमारी है जिसकी वजह से दिमाग का मांसपेशियो पर नियंत्रण समाप्त हो जाता है। इस बीमारी वजह से वह धीरे-धीरे पूरी तरह आशक्त होकर व्हील चेयर तक सीमित हो गये। उनका मस्तिष्क ही केवल सक्रिय रहा और इसी की बदौलत उन्होंने ब्रह्माण्ड विज्ञान में जो काम किया उसके कारण वे विश्व के महानतम वैज्ञानिकों की श्रेणी में शामिल हो गये।

- 228 के, वर्मा कालोनी, अलहलादपुर, गोरखपुर

हमें ही सोचना होगा

पर्यावरण संरक्षण की बात कोई नयी नहीं है फिर भी बार-बार लगातार इस पर चर्चा की जरूरत इसलिए होती है कि हम इसमें अपनी भूमिका को निभाते रहें। पर दिक्कत यह है कि न हम इसे गंभीरता से ले रहे हैं और न ही अपने दायित्वों का निर्वहन लेश मात्र भी नहीं करते हैं। बेफ्रिक भी इतने कि इससे हमें क्या? पर बात कितनी गंभीर है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि भारत के सभी बड़े महानगरों की वायु प्रदूषण की स्थिति तय मानक से काफी ज्यादा है। दिल्ली में तो पिछली वर्ष अक्टूबर माह में धूएँ का घना कोहरा रहा महीनों छाया है।

अपने घर के सभी उत्सव में हम आतिशबाजी जरूर करेंगे, अपने मन को मनाते हुए कि ऐसे अवसर जीवन में एक बार ही तो आते हैं। साफ-सफाई करके कूड़ा इसलिए जला देते हैं क्योंकि, उसको सही जगह निस्तारित करने में थोड़ी मेहनत लगेगी। खेत में परली जला देते हैं क्योंकि, उसे समाप्त करने का सबसे आसान और सस्ता वही दिखता है। ऐसे ही और भी बहुत से उदाहरण हैं। इस पर चर्चा के दौरान यह बात निकल कर आती है कि, यह तो सरकार का दायित्व है, फैक्ट्रियों पर रोक लगे, कड़ा कानून बने आदि-आदि। यदि सब सरकार की ही जिम्मेदारी है तो फिर हमारा नैतिक कर्तव्य क्या हुआ?

यह सब करते हुए हम भूल जाते हैं कि, हमारा यह कदम कितना आत्मघाती है, हमारे साथ-साथ हमारी अगली पीढ़ी के लिए हम क्या दे जायेंगे। आँकड़े बताते हैं कि, देश में श्वास सम्बन्धी रोग बढ़ रहे हैं। फेफड़े और श्वसन तन्त्र के कैंसर के मामलों में वृद्धि हुई है। शोध से यह निष्कर्ष निकाला है कि श्वसन संबंधी रोगो में ज्यादातर मामलों में कारण वायु प्रदूषण के एलर्जी तत्व हैं।

इस पर हमें गंभीरता से सोचना होगा कि, उन सभी कार्यों का विरोध भी करेंगे जो पर्यावरण को नुकसान पहुँचा रहे हैं और अपने जीवन में कम से कम 5 वृक्ष लगायेंगे ही नहीं अपितु उन्हें प्रौढ़ होने तक संरक्षित भी करेंगे।

- डा० महेन्द्र अग्रवाल

प्रबंध एवं प्रधान सम्पादक

राष्ट्रगीत

सुजलां सुफलां मलयजशीतलाम्
शस्यश्यामलां मातरम्।
वन्दे मातरम् ।।
शुभ्रज्योत्स्नां पुलकितयामिनिम्
फुल्ल-कुसुमित-द्रुम-दल-शोभिनीम् ।
सुहासिनीं, सुमधुरभाषिणीम्
सुखदां वरदां मातरम्।
वन्दे मातरम्।।
कोटि-कोटि कण्ठ, कल-कल निनाद कराले
कोटि-कोटि भुजैर्धृत-खर-करवाले,
अबला कैनो मा एतो बोले।
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीं
रिपुदलवारिणीं मातरम्।
वन्दे मातरम्।।
तुमि विद्या, तुमि धर्म तुमि हृदि, तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे बाहु ते तुमि मा शक्ति,
हृदये तुमि मा भक्ति,
तोमारई प्रतिमा गड़ि मन्दिरे-मन्दिरे मातरम्।
वन्दे मातरम् ।।
त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी
कमला कमलदलविहारिणी
वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्
नमामि कमलां अमलां अतुलां
सुजलां सुफलां मातरम्।
वन्दे मातरम्।।
श्यामलां सरलां सुस्मितां भूषितां
धरणीं भरणीं मातरम्।
वन्दे मातरम्।।
।। भारत माता की जय ।।

एक अपील

हम सभी बड़े जोश और उत्साह से अपने पर्वों को मनाते हैं। हम तन-मन एवं धन से ऐसा जुड़ाव रखते हैं जैसे ये हमारे जीवन का मूल स्पन्दन हो। अपने पर्वों के बहाने हम अपनी पहचान एवं अपनी जड़ों से जुड़ा महसूस करते हैं। यह अच्छी बात है क्योंकि हमारे पर्व हमारी संस्कृति एवं अस्मिता से जुड़े हुए हैं, परन्तु यह जोश और उत्साह अपने राष्ट्रीय पर्वों में देखने को नहीं मिलता है। राष्ट्रीय पर्व हमारे राष्ट्र की पहचान है। किसी भी व्यक्ति से परिवार बड़ा होता है, परिवार से बड़ा समाज होता है, समाज से बड़ा राष्ट्र होता है। यदि राष्ट्र है तभी हम हैं। राष्ट्र से ही हमारी अस्मिता एवं अस्तित्व है। कहने का आशय यह है कि राष्ट्र सर्वोपरि है। इस कारण राष्ट्रीय पर्व एवं राष्ट्रीय चिन्तन सर्वोपरि है। हमें अपने राष्ट्रीय पर्वों को जोश, उत्साह एवं हार्दिक आत्मीयता से न सिर्फ मनाना चाहिए। यह पूरे दिन का पर्व होना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार हमारे अन्य पर्व होते हैं।

- सामयिक नेहा

- पृष्ठ 42 का शेष....

लिए जाते हैं। फसल को कीट से और कीटनाशकों के कुप्रभाव से स्वयं को बचाने का यह सार्थक तरीका है। कम खर्चीला भी।

मानव फेरोमोन :- डॉ० विलफ्रेड कटलर ने 1975 से सतत अध्ययन और अनुसंधान कर 1986 में सर्वप्रथम मानव शरीर में इनकी उपस्थिति चिन्हित कर मान्यता प्राप्त जर्नल में रिपोर्ट की। उन्होंने पुरूष और महिलाओं की कांख (आर्मपिट-बगल) में स्रावित श्वेद को विधिवत एकत्रित कर, उनका घोल बनाया और ठन्ड से जमा कर रख दिया। अगले साल उसे पिघला कर उन्हें स्वेच्छा से भाग लेने वालों के ऊपरी ओठ पर नाक के नीचे लगा कर अलग अलग समूह (कंट्रोल और टैस्ट ग्रुप) में डबल ब्लाइन्ड विधि से असर का आकलन किया। निम्न निष्कर्ष निकले-

1. महिलाओं में स्रावित फेरोमोन से एक साथ रहने वाली महिलाओं में ऋतुचक्र समय और अवधि एक जैसी हो जाती है। जब उनकी कांख से एकत्रित फेरोमोन को साथ न रहने वाली महिलाओं में लगाया गया तो समयोपरांत उनमें भी ऋतुचक्र समानांतर हो गया। दो तरह के फेरोमोन चिन्हित हुए जो ओवुलेशन के पहले और उसके बाद के समय को प्रभावित करते हैं।
2. जिनमें ऋतुचक्र नियमित नहीं थे उनमे नियमित हो गए।
3. महिला में पुरुष से निकट व नियमित सानिध्य, सहवास व समागम से ऋतुचक्र में नियमितता, सम्बन्धित व्याधियों में कमी और मेनोपाज- रजोनिवृति में देरी और सुगमता आती है। जब इस समूह की महिलाओं के फेरोमोन को पुरुष के सानिध्य में न रहने वाली एकल महिलाओं में लगाया गया तो उनमें भी समानांतर बदलाव आये। उनके यौन हार्मोन चक्र में भी बदलाव आया।
4. यौन क्रियाशीलता में, व्यवहार में प्रतिलक्षित परिवर्तन, सम्बन्धित फेरोमोन प्रयोग में भी सामने आये। यथा जो हॉर्मोनल चेंजेज व्यवहार में पाये गए थे वे ही चेंजेज केवल फेरोमेन लगाने से भी मिले।

आज ये फेरोमोन यौन आकर्षक सैन्ट व स्प्रे के रूप बाजार में बिक रहे है। भारत के मेडिकल छात्रों में एक व्यापक मजाक प्रचिलित है। छात्र अपना हाथ ऊपर कर अपनी बगल में फूंक मार कर छात्राओं की ओर छोड़ता है। आशय कि उससे प्रभावित बायोकम्पेटेबल सहपाठनि उसकी और आकर्षित होगी। जोड़े बनते भी हैं।

डॉ० कटलर की रिपोर्ट के बाद मानव फेरोमोन चिन्हित करने का काम काफी आगे बढ़ा है। आंसुओं में फेरोमोन चिन्हित किए गए हैं - खुशी के आंसुओं में अलग और गम के आंसुओं में अलग। स्लाइवा (लार) व शरीर के अन्य स्रावों में भी फेरोमोन चिन्हित किए जा रहे हैं। मानव शरीर से स्रवित फेरोमोन संभवतः एक फेरोमोन न होकर फेरोमोनों का कॉक्टेल या मिश्रण है जो व्यक्ति विशेष का फेरोमोन कोड होता है। पुलिस अपराधी के कपड़े जूते या अन्य वस्तु जिसके संपर्क मे अपराधी आया हो को खोजी कुत्ते को सुँघा कर अपराधी को खोजती है। कुत्तों में घ्राण शक्ति विलक्षण होती है। अरबों खरबों ऐसे फेरोमोन में से किसी एक को पहचानने की क्षमता उनमें होती है।

अधिकांश फेरोमोनो की अनुभूति और प्रतिंक्रिया अवचेतन मस्तिष्क में होती है। आवश्यक नहीं कि गंध के रूप उनकी अनुभूति चेतना में भी हो। जीव नश्वर है, जीवन अनन्त, शाश्वत। जीव इकाई है, प्रजाति जीवन। जीव अपनी शाश्वतता प्रजाति के अंग के रूप में ही बनाये रख सकता है। इसके लिए आवश्यक है प्रजनन। जीव का जिस डी एन ए अणु से जन्म हुआ ठीक उसी डी एन ए अणु से संतति उत्पन्न कर अपना पुनर्जन्म कर ही अपनी निरंतरता बनाए रख सकता है। हर जीव की प्रजनन प्रक्रिया जीन निर्धारित और नियत होती है। यौन आकर्षक फेरोमोन कब बनाना और छोड़ना सब जन्म से जीन नियत होता है। जीव के गुणसूत्रों में उसकी जीवन कुंडली होती है। पूरा जीवन उन्हीं से नियंत्रित होता है। पुनर्जन्म द्वारा अपनी प्रजाति की रक्षा करना जीव का प्रकृति नियत प्रमुख धर्म होता है।

- 15, विजय नगर, डी० ब्लाक, मालवीय नगर, जयपुर -302017

आर्डर फार्म

मै सामयिक नेहा पत्रिका का आजीवन/पंचवर्षीय सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। कृपया मेरी प्रति मुझे निम्न पते पर भेजने का कष्ट करें।

नाम.....

.....उम्र.....

पता.....

.....

.....

मैं.....

रु० का मनीआर्डर/बैंक ड्राफ्ट नागंलिया एजूकेशन एण्ड हेल्थ एसोसिएशन (Nangalia Education & Health Assocation) के नाम से भेज रहा/रही हूँ।

....

दिनांक हस्ताक्षर

E-mail : .....

.....

Mob.: .....

आजीवन सदस्यता (20 वर्षो के लिए)	रु० 1200.00
आजीवन सदस्यता विदेशों के लिए	100$
पंचवर्षीय सदस्यता	रु० 300.00
एक प्रति	रु० 20.00

सदस्यता शुल्क निम्न पते पर भेजें :-

कार्यालय : ''सामयिक नेहा''

नागंलिया अस्पताल परिसर, नार्मल रोड, गोरखपुर- 273001

L - 6067
श्री संतोष लाल पूर्णिमा
म.नं. 237-एच, बशारतपुर पूर्वी, मेडिकल रोड, गोरखपुर

L - 6068
श्री विजय कुमार
ए-01, हलवासिया इनक्लेव, इन्दिरा नगर, लखनऊ

L - 6069
डा० श्रीमती रीता मिश्रा
प्रगति मैटरनिटि एण्ड सर्जिकल क्लीनिक, कसया रोड, कूड़ाघाट चौक, गोरखपुर

L - 6070
डा० आर०एन० मिश्रा
मृत्युंजय हास्पिटल, खोआ मण्डी गली, सिनेमा रोड, गोरखपुर

L - 6071
श्रीमती किरन श्रीवास्तव
C/o डा० एस०एल० श्रीवास्तव, चेतना मसाला गली, शेखपुर, गोरखपुर

L - 6072
श्री वी०के० श्रीवास्तव
एफ-501, लिलारिया अपार्टमेन्ट, शापिंग काम्पलेक्स, समाशावली मेन रोड, बड़ोदरा

L- 6073
श्री अमित त्रिपाठी
टाण्डा, बड़हलगंज, गोरखपुर

L- 6074
श्री पंकज प्रसाद
किरन भवन, डी-236, गोरखपुर